श्री श्वे० स्था० जैन स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा का ४६वां पुष्प

卐

सोहन काव्य-कथा मंजरी

卐

प्रकाशक :
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ
गुलाबपुरा-३११०२१ (राज.)

रचनाकार :
स्वाध्याय-शिरोमणि, आचार्यप्रवर
श्रद्धेय सोहनलालजी म.सा.

★ पुस्तक :

सोहन काव्य कथा मञ्जरी भाग—१०



★ रचनाकार :

श्रद्धेय गुरुवर्य आचार्य श्री सोहनलालजी म. सा.



★ सम्पादक :

डॉ. शशिकर 'खटका राजस्थानी'
एम. ए., पीएच. डी.



★ प्रथम संस्करण :

१००० प्रति अगस्त १९९७



★ मूल्य :

लागत मात्र १६) रु.



★ प्रकाशक :

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी
जैन स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा (राज.)



★ मुद्रक :

मंगल मुद्रणालय
महावीर सर्किल, गंज, अजमेर
फोन : 432626/30326

प्रकाशकीय

साहित्य की विधाओं में कथा उतनी ही प्राचीन है जितनी कि स्वयं मानव-सृष्टि। जब दो व्यक्ति मिलते हैं एवं परस्पर कुशल-क्षेम के समाचार पूछते हैं, तब वे अपनी कहानी ही कहते हैं या सुनाते हैं। यही कहानी का उद्‌गम स्रोत है।

तब से अब तक इस कहानी ने एक लम्बी दूरी की यात्रा तय की है। कथा से कहानी, फिर लघु कथा व बोध कथा के रूप में विकसित होकर अब वह अ-कहानी की सीमा को स्पर्श करने लगी है।

किसी भी आयु के व्यक्ति के लिए कहानी सुनना या पढ़ना आनन्ददायक होता है। अपने देश में ही दादी-नानी के द्वारा कहानी कहने-सुनने की परम्परा चली आ रही है। शिक्षितों और अशिक्षितों में समान रूप से कहानी की विधा लोकप्रिय है। विविध घटना-क्रम के साथ संजोए गए पात्रों के गतिमान जीवन के माध्यम से मानो पाठक अपने ही जीवन की कहानी पढ़ता है। वह घटना भी अपनी बात कहकर पाठक के मन में निराकार रूप से पैठकर उसे आन्दोलित करती रहती है अतः उसकी अनुगूंज तो लम्बे समय तक सुनाई पड़ती रहती है। इस प्रकार कहानी जीवन से जुड़कर जीवन मूल्यों की समृद्धि का माध्यम बनती है।

कथा का मूल आधार घटना का चमत्कार होता है तथा घटना-चमत्कार किसी धार्मिक, नैतिक या साहसिक मूल्य की स्थापना करता है। अति प्राचीन काल में लिखी गई पंचतंत्र, हितोपदेश, वेताल पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी आदि की कथाएं नीति की शिक्षा प्रदान करने वाली रही हैं जिससे व्यक्ति व समाज के जीवन को एक दिशा मिली है। इनमें वर्णित व्यक्ति एकाकी न होकर सम्पूर्ण समाज के एक प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित होता है इसलिए पाठक उसके जीवन से प्रेरणा प्राप्त कर पाते हैं। यद्यपि कथा का प्रस्थान बिन्दु व्यक्ति है किन्तु गन्तव्य तो समाज ही होता है।

इस कथा-शिल्प के साथ यदि काव्यात्मकता का भी मधुर मेल हो जाय तो सोने में सुगन्ध आ जाती है, गेयत्व का मेल होने के कारण, माधुर्य में अभिवृद्धि होने से उसकी प्रभावशीलता द्विगुणित होकर पाठक के मन पर स्थायी असर कर जाती है।

प्रस्तुत काव्यात्मक कथा-संकलन के कथा शिल्पी विद्वद्वरेण्य, परम श्रेष्ठ, मधुरवक्ता आशुकवि आचार्य प्रवर, गुरुवर्य श्री सोहनलाल जी म. सा. एक ऐसे ही अमर कथाकार हैं जिन्होंने अपनी कथाओं के माध्यम से तर्कजाल की भांति उलझे हुए मनुष्य के मन की समस्याओं को सुलझाया है, सांसारिक व्यामोह से उसे मुक्तकर मानवीय संवेदनाओं की अनुभूति से उसे सम्पन्न बनाया है और इस प्रकार स्वस्थ अनासक्त एवं समर्पित व्यक्ति का तथा शुद्ध आचार वाले समाज का निर्माण किया है।

वि. सं. २०४४ का वर्ष श्री स्वाध्यायी संघ के आद्य संस्थापक, राजस्थान-केसरी श्रद्धेय गुरुवर्य श्री पन्नालाल जी म. सा. का जन्म शती वर्ष था। इसी समय, हमारी

आस्था के केन्द्र स्वाध्याय-शिरोमणि श्रद्धेय गुरुवर्य आचार्य श्री सोहनलाल जी म. सा. ने अपने जीवन के ७७ वें वसन्त में प्रवेश कर अपने महिमा-मंडित जीवन से हमें गौरवान्वित किया है। इसी वर्ष पूज्य गुरुवर्य द्वारा समुपदिष्ट श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ गुलाबपुरा ने भी अपनी स्थापना के ५० वर्ष पूरे किए हैं। इस प्रकार यह त्रिवेणी-संगम हम सभी के लिए परम हर्ष का विषय रहा है।

पूज्य गुरुदेव के अनुयायी भक्तों की यह हार्दिक अभिलाषा थी कि उनके अब तक के प्रकाशित व अप्रकाशित काव्यात्मक कथानकों को जो लगभग ५०० से भी अधिक हैं— क्रमशः प्रकाशित कराया जाय ताकि पाठक उनसे समुचित लाभ उठा सकें एवं साहित्य के अनुसंधित्सुओं के लिए भी पथचिन्ह बन सकें। वर्तमान दूषित वातावरण में युवकों को सत्साहित्य उपलब्ध नहीं होने से वे घटिया एवं चरित्रहन्ता साहित्य पढ़कर अपना समय नष्ट करते हैं। उन्हें भी व्यावहारिक व नीतिपरक साहित्य सुलभ कराना भी इसका एक उद्देश्य रहा है।

इसी भावना के अनुसार पूज्य गुरुदेव श्री द्वारा रचित कथानकों को क्रमशः प्रकाशित करने की योजना बनी। इस योजनान्तर्गत सोहन काव्य कथा मंजरी के ९ भाग अब तक प्रकाशित हो चुके हैं जिन्हें सुधी पाठकों ने एवं सन्त-सतियों व स्वाध्यायी बन्धुओं ने काफी सराहा है। इसका यह दसवां पुष्प पाठकों को समर्पित करते हुए परम हर्ष है।

इस संकलन को संपादित कर तैयार करने में हमें डॉ. शशिकर जी 'खटका राजस्थानी' विजयनगर का पूरा पूरा सहयोग मिला है, इसके लिए उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं। डॉ. शशिकर जी स्वयं कवि, गायक एवं लोक तर्जों के ज्ञाता हैं अतः प्रस्तुत संकलन को उन्होंने मनोयोग पूर्वक तैयार कर जो प्रशंसनीय प्रयास किया है उसके प्रति हार्दिक आभार।

इस संकलन के प्रकाशन को, उदार हृदयी, दानवीर, परम गुरुभक्त श्रीमान् जवरचंद जी सा. चोरडिया भैरून्दा निवासी (वर्तमान—मेडता) ने द्रव्य का सद्व्यय कर, संभव बनाया है, इसके लिए उनके प्रति हार्दिक आभार प्रकट करते हैं। श्रीमान् चोरडिया सा. का सम्पूर्ण परिवार धर्मनिष्ठ एवं श्रद्धालु है उन्होंने प्रस्तुत प्रकाशन में सहयोग प्रदान कर अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया है अतः वे धन्यवादार्ह हैं। श्री मंगल मुद्रणालय, अजमेर के संचालकों ने अति अल्प समय में इसका मुद्रण कार्य सम्पन्न कर एवं प्रूफ संशोधन कर जो सहयोग प्रदान किया है, उसके प्रति भी हम आभार प्रकट करते हैं।

आशा है पाठकगण इस काव्य कथा माला से लाभ प्राप्तकर जीवन में नैतिकता विकसित कर सकेंगे, इसी विश्वास से—

गुलाबपुरा
दिनांक—२५-७-९७

नेमीचन्द खाबिया
मंत्री
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ
गुलाबपुरा

प्रस्तावना

संसार के सभी प्राणियों की यह भावना होती है कि उनका जीवन सुखी एवं सानंद बने। जीवन में उनके प्रयत्न भी इसी के लिए होते हैं। इसका एक ही उपाय है कि हम सद्‌गुणों के आराधक बनें, गुणीजनों के उपासक बनें, गुणीजनों के बताये पथ पर अग्रसर होवें। गुणीजनों का जीवन सूर्य की भांति होता है। वह अपनी आलोक रश्मियां लुटाकर अंधकार का हनन करता है। जिसके हृदय में ज्ञान का सूर्य उदय हो जाता है वह महा-मानव स्वयं के जीवन को आलोकित करते हुए अपनी ज्ञान रश्मियों से करोड़ों मानवों के जीवन को प्रकाश से भर देता है। साहित्य का अभिप्राय भी यही है कि वह सब के हित साधने वाला हो।

परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर श्री सोहनलाल जी महाराज भी ज्ञान के प्रदीप्त भानु हैं। वे सेवा, साधना, सरलता, सहृदयता के भण्डार हैं। आपकी कलम में भी इन्हीं गुणों का रस बरसता रहता है। काव्य रचना में सदैव सन्त जीवन की सरलता एवं स्वाभाविकता का निर्मल निर्झर प्रवाहित करना आपश्री की विशेषता रही है। अपने त्यागमय जीवन और सहज साधना के साथ सतत काव्य साहित्य की रचना करके आदर्श उपस्थित करने में आपका भारतीय समाज में विशिष्ट योगदान है। आपका चिन्तन हमेशा आत्मा का पूर्ण विकास कर उसे परमात्मा की ओर अग्रसर करने का रहा है। महापुरुषों की वाणी तो पीयूष से भरे घट होते हैं। अपनी विचारधारा एवं वाणी को शब्द सुमनों में ढालना आचार्य श्री का उद्देश्य रहा है, यही कारण है कि प्राचीन कथानकों को विभिन्न राग-रागनियों में ढालकर गेय रूप में लिखना ही आपकी विशेषता है।

प्रस्तुत कृति काव्य-कथानकों की अनुपम माला है जिसमें बीस मोती अपनी आभा विखेर रहे हैं। पुण्य का तेज व सुकृत का फल वृहत कलेवर को समेटे हुए हैं, वहीं अन्य कथानक जीवन के सत्य एवं यथार्थ का बोध कराने में सक्षम हैं। आचार्य श्री ने पूर्व परि-चित शैली में ही इस कृति को संजोया है। श्रोता एवं पाठक को कर्त्तव्य निष्ठ, कर्मशील व धर्ममय जीवन जीने की प्रेरणा देना सन्त एवं साहित्यकार का मूल उद्देश्य होता है, आपको इसमें पूर्ण सफलता मिली है।

आज जब देश व समाज में मूल्य हीनता अमानवीय कृत्यों के कारण विकृतियां बढ़ती जा रही हैं, धर्म पर नीति ने नहीं बल्कि राजनीति ने घिनौना प्रभाव डालना प्रारंभ कर दिया है ऐसी विकट परिस्थितियों में ऐसी कृति की सृजना महान् लोकोपकारी कार्य है। प्राचीन भारतीय गौरव का गुणगान, नगर वैभव, सेवक-प्रजा का वर्णन इस कृति में बिखरा पड़ा है। कवि का उद्देश्य है कि हिंसा पर अहिंसा की, अनीति पर नीति की, झूठ पर सत्य की, अन्याय पर न्याय की विजय हो। इसके अन्तर्गत रचना को पूर्ण सफलता मिली है।

कृति की भाषा प्रसाद गुण सम्पन्न है जिसे पढ़ते हुए पाठक सहज ही आनन्द के हिंडोले में झूलता रहता है। एक ओर जहां अनुप्रास की अनुपम छटा मिलती है तो अनेक स्थानों पर लोक प्रचलित मुहावरों का भी प्रयोग हुआ है जैसे लोहे के चने चबाना, आंखें चार होना आदि। कृति की भाषा सरल एवं आम बोल चाल की भाषा होने के कारण उर्दू शब्दों का भी इसमें सहज प्रयोग हो गया है जैसे—खफा, काफूर, खबरदार, मुफ्त, खुमारी, आन, फरमाय आदि! जनाधारित भाषा के प्रयोग से कृति लोकोपकार का महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकती है। प्रत्येक पाठक अर्थ गांभीर्य के चक्कर में न पड़कर सहजता से आगे बढ़े, इसमें कवि को पूर्ण सफलता मिली है। कृति में जन जीवन के विविध पक्ष, राग-रंग, हास-उल्लास के अद्भुत रंग बिखेर कर सन्त कवि ने आदर्श की स्थापना की है।

मुझे आशा एवं विश्वास है कि यह कृति धर्म प्रेमी पाठकों के अलावा वर्णनात्मक काव्य का आनन्द उठाने वाले जिज्ञासुओं की भी आकांक्षा पूर्ण करेगी। रसज्ञ श्रोताओं का कंठहार बनकर के जन मन में रच बस कर लोक मंगल में सफल होगी। धर्म, ज्ञान, न्याय नीति, प्रेम, कर्म, त्याग, तप की गरिमा को काव्य रचना के माध्यम से स्थापित करने वाले, सरल हृदयी, आशुकवि आचार्य श्री को इस कृति की सृजना हेतु मैं अन्तर से प्रणम्य निवेदन करता हूँ।

26 जुलाई 1997
कवि कुटीर
विजयनगर (अजमेर-राज.)

डॉ. शशिकर 'खटका राजस्थानी'
एम. ए., पीएच. डी.



पूज्य दादा सा. श्री सेठ साहब श्री जीवराजजी सा. चोरड़िया, मेड़तासिटी
स्वर्गवास मगसिर शुक्ला ६ सं. २०२१



पूज्य पिताजी सा. श्री भंवरलालजी सा. चौरड़िया, मेड़तासिटी
स्वर्गवास आसोज सुदि १० सं. २०२८

श्रेष्ठिवर्य श्रीमान् जबरचंद जी सा. चोरड़िया

एक–परिचय

भारत के तत्वचिन्तक आचार्यों ने जीवन के संवंध में गहराई से विचारकर कहा है— उस व्यक्ति का जीवन पूर्ण सार्थक है जिसके जीवन में सद्भावना, सहयोग उदारता व तप-त्याग की निर्मल भावनाएं अठखेलियां कर रही हों। जो केवल कल्पना लोक में ही उड़ान न भरता हो, अपितु इस धरती की कठोरता का भी अनुभव कर पसीजता हो।

प्रस्तुत कथन की कसौटी पर यदि हम श्रेष्ठिवर्य श्रीमान् जवरचंद जी सा चोरड़िया के जीवन को परखते हैं तो उनका जोवन परम यशस्वी और तेजस्वी विदित होता है।

आपका जन्म भादवा बुदी ६ वि. सं. १९९६ को भैरून्दा ग्राम में हुआ। आपके पितामह स्व. जीवराज जी सा. चोरड़िया प्रमुख समाजसेवी एवं वात्सल्य मूर्ति थे एवं पिता श्रीमान् भंवरलाल जी सा चोरड़िया भी सरलता, सादगी व निर्मलता के प्रतीक थे। आपकी माता श्रीमती केसर बाई जी भी एक धर्म परायणा, सेवा निष्ठ एवं विशाल हृदया महिला हैं। इस सम्पूर्ण परिवार की पूज्य गुरुवर्य श्री पन्नालाल जी म. सा. एवं उनके शिष्य परिवार के प्रति अपूर्व व अनुकरणीय निष्ठा रही है।

आपकी व्यापार-कर्म स्थली मेड़ता सिटी रही है। नित्य सामायिक, स्वाध्याय करना एवं संत सतियों की सेवा में अग्रणी रहना आपका स्वभाव वन गया है। सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं के सुसंचालन के लिए अद्यावधि आपने लाखों रु. का दान दिया है। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती पिस्ता कंवर बाई जी चोरड़िया का भी आपकी प्रत्येक धार्मिक प्रवृत्ति में उदारता पूर्ण सहयोग रहता है।

आपके दो भाई श्रीमान् मिलापचंद जी सा चोरड़िया एवं श्रीमान् प्रसन्नचंद जी सा चोरड़िया भी व्यवहार कुशल, उदार, सेवानिष्ठ एवं प्रामाणिक वृत्ति वाले व्यक्ति हैं। आपके चार पुत्र सर्वश्री ज्ञानचंद जी चोरड़िया कोयम्वटूर में, श्री सुजीतकुमार जी चोरड़िया अहमदावाद में, श्री गौतमचंद जी चोरड़िया मेड़ता सिटी में अपने अपने व्यवसाय में संलग्न हैं एवं श्री पदमचन्द जी चोरड़िया अध्ययनरत हैं। आपकी दो पुत्रियां श्रीमती कमलेश सूरिया (भीलवाड़ा) व श्रीमती विमलेश ओस्तवाल (ब्यावर) भी सुयोग्य एवं संस्कार संपन्न महिलाएं हैं।

इस प्रकार श्रीमान् चोरड़िया सा. का सम्पूर्ण परिवार आदर्श एवं धर्मनिष्ठ है। आपका जीवन भी सच्चरित्रनिष्ठ व सेवाभावी रहा है। मधुर व मिलनसार स्वभाव के आप धनी हैं। सदैव की भांति प्रस्तुत प्रकाशन में भी आपका उदार सहयोग प्राप्त हुआ है।

अनुक्रम



१ | पुण्य का तेज

(तर्ज : ख्याल)

पुण्यवान पुरुष के सुख सम्पति रहती हर पल साथ में ।। टेर ।।

आर्य भूमि भारत की महिमा गाते हैं नित देव।
सागर चरण पखारे इसके बादल करते सेव जी ।।
वन उपवन हैं सभी मनोहर देख के मन हर्षाय।
हिमगिरि की शोभा निरखन को देव हमेशा आय जी ।।
इस भूमि पर नगर सारंगपुर सुन्दर बृहदाकार।
बाग-बगीचे सर-सरिताएं ऊँचे बने प्राकार जी ।।
मधुकान्त नृपति नगरी का न्याय नीति का ज्ञाता।
प्रजा हितैषी सभी जनों से रखे प्रेम का नाता जी ।।
महामंत्री सभी भृत्यगण चले आज्ञा अनुसार।
महारानी कमला कमला सी पतिव्रता गुण धार जी ।।
शक्ति जिसके पास में होती सब ही लोहा मानें।
उसे हराने का मतलब लोहे के चने चबाने जी ।।
कई राजा अधीन भूप के हो गया वह सम्राट।
राजमहल में वैभव बिखरा सुख का छाया ठाट जी ।।
समय-समय पर सेवा देने नृप नगरी में आय।
संबलपुरी नृप शूरसिंह भी तावेदारी माँय जी ।।
उत्तम नगरी का वो स्वामी ज्ञानवान होशियार।
राजनीति का पूरा ज्ञाता सुखी रखे नर नार जी ।।
विमला रानी महारानी है विमलमति गुणधार।
दीन हीन नहीं जाये खाली आकर उसके द्वार जी ।।
ओनूप, मंगल, राज, तेजसिंह सुत उसके हैं चार।
ज्ञानवान-गुणवान सभी के उत्तम है आचार जी ।।
भूप वृद्ध हो गये जानकर करे तीन तो काम।
तेजसिंह छोटा होने से करे सिर्फ आराम जी ।।

खेलकूद पढ़ने लिखने में समय वीत रहा जाय।
मित्रों की टोली में बैठकर बन जाता महाराय जी ।।
दीवान, पुरोहित, सेनापति बच्चों को वह बनाय।
कोतवाल से कहे सभा में अपराधी को लाय जी ।।
दोष दोषी का जितना भी हो सजा वैसी ही पाय।
कभी क्षमा कर देता है कभी कोड़े वह लगवाय जी ।।
कुछ बालक कोड़े खाकर के घर पर रोते आय।
मात-पिता पूछे तो उनको कारण सब बतलाय जी ।।
मना करे अभिभावक कल से नहीं वहाँ पर जाय।
फिर भी बालक तेजसिंह के पास चले ही आय जी ।।

तेजसिंह की हरकत सुनकर खफा कई हो जाय।
एक दिवस कुछ नगर निवासी भूप पास में आय जी ।।
महाराज ने मुस्काकर के आसन दे बिठवाय।
कैसे आप पधारे सज्जन दो मुझको बतलाय जी ।।

प्रसन्न वदन सब वहां बैठकर अपनी बात बताय।
राजकुंवर सबसे छोटे को कर कृपा आप समझाय जी ।।
शूरसिंह नृप सुनकर बातें बोला नहीं घबराय।
तेजसिंह को अभी बुलाकर मैं दूंगा समझाय जी ।।

अपने बच्चों से भी कह दें नहीं पास वे जांय।
कोई साथ नहीं खेले तो अक्ल ठिकाने आय जी ।।
मना किया महाराज बच्चों को पर वे ठहरे बाल।
मार खा के भी राजकँवर से करते नहीं सवाल जी ।।

चलो ठीक है चिन्ता छोड़ो अभी उसे बुलवाऊँ जी।
नहीं काम फिर करे वो ऐसा बिठा पास समझाऊँ जी ।।
कष्ट औरों को हो जिस कारण करे न ऐसा काम।
मिले शिकायत राजकुंवर की तो राजा बदनाम जी ।।

हुई शिकायत आज तुम्हारी बच्चे बोले आकर।
देंगे दण्ड अब महाराज भी सभा बीच बुलवाकर जी ।।
मेरी शिकायत गई राज में तेजसिंह ली जान।
किसके तात ने हिम्मत की है करो अभी पहचान जी ।।

नाम बताया कुछ बच्चों ने क्रोध हृदय वह लाया।
कोतवाल तुम कोड़े मारो यह आदेश सुनाया जी ।।
कोड़े खाकर के वे बालक रुदन वहां मचाय।
तेज सिंह के हाथ जोड़ कर रोते सब घर आय जी ।।

तात-मात से करे शिकायत रो रो सब बतलाये ।
नगर निवासी बच्चों के संग नृप महलों में जाये जी ।।
महाराज कुछ सुनते नाहीं उनको ही धमकाये ।
अपमानित होकर के सारे घर अपने वे आये जी ।।
निर्णय करके सभी नगर जन सारंगपुर को जाये ।
मधुकान्त नृप को मिलकर वे सारी बात बताये जी ।।
पुत्र मोह में पड़कर राजा बात न सुने हमारी ।
अपराधी को दण्ड देने के सिर्फ आप अधिकारी जी ।।
सारी बात समझकर राजा क्रोध नयन में लाया ।
मेरे रहते मेरी प्रजा को उसने यहां सताया जी ।।
आश्वासन दे कहे सभी को आप नहीं घबरायें ।
कष्ट मिटेंगे आप सभी के निश्चिन्त बने घर जायें जी ।।
महाराज से मांग विदा वे मुस्काते घर आये ।
तेज सिंह को दुष्ट कर्म की सजा यहां मिल जाये जी ।।
मधुकान्त नृप गुप्तचरों को बुला बात समझाये ।
संबलपुरी जाकर के वहां का हाल मुझे बतलाये जी ।।
गुप्त वेश धर गुप्तचरों ने जाकर पता लगाया ।
जो कुछ देखा जाना उसको आकर वहाँ बताया जी ।।
नगर जनों ने कहा सत्य सब दूत एक भिजवाया ।
शूरसिंह को निर्णय लेकर गद्दी से हटवाया जी ।।
समाचार सुनकर यह भूपति मन में अति घबराया ।
तेज सिंह के कारण मैंने यह अपमान उठाया जी ।।
तेज सिंह को बुला के नृप बहुत वहां फटकारा ।
तेरे कारण महाराज ने गद्दी से आज उतारा जी ।।
शूरसिंह तत्काल वहाँ से सारंगपुर में आया ।
राज सभा में आकर उसने अपना शीश झुकाया जी ।।
क्षमा करें स्वामी अब मुझको हुई है मुझ से भूल ।
तेज सिंह को समझा दूंगा वही है स्वामी मूल जी ।।
निर्णय बदल नहीं मैं सकता आप यहां से जायें ।
सेवा की इसके बदले में कृषि भूमि कुछ पायें जी ।।
एक कुआ कुछ कृषि भूमि का पट्टा उसने पाया ।
भाग्य बदलते देर लगे ना शीश झुका घर आया जी ।।
सेनापति ने आकर उससे गढ़ खाली करवाया ।
नगर के बाहर शूरसिंह ने घर अपना बनवाया जी ।।
दास दासी भी नहीं रहे हैं करे कृषि का काम ।
मेहनत कर परिवार पालता छिन गया सुख आराम जी ।।

जमींदारी में चारों ही सुत रहे नशे में चूर।
जमींदारी छिनते ही उनका नशा हुआ काफूर जी ।।
महारानी की सेवा में अब रहे दास ना दासी।
अपना काम हाथ से करती लोग उड़ाते हांसी जी ।।
कर्मों का सब खेल जगत में कर्म ही खेल खिलाये।
कभी राव तो कभी रंक ये कर्म ही यहां बनाये जी ।।

चारों भाई खेती करते हल व बैल चलाय।
भोजन रानी बना हाथ से पति के संग भिजवाय जी ।।
एक साथ जब कभी बैठते याद पुरानी आय।
तेज सिंह के कारण ही यह दशा बनी दुःख पाय जी ।।

इक दिन शूर सिंह ले भोजन चला खेत को जाय।
बढ़ा नदी के अन्दर पानी तट पर ही रुक जांय जी ।।
वहीं बैठ वह सोचे मन में कैसे पार मैं जाउं।
उतर नदी में गया तो निश्चित पानी में बह जाऊं जी ।।

उधर चारों ही मेहनत करके वृक्ष तले आ जाय।
भूख लगी है हमको भारी तात नहीं क्यों आय जी ।।
कहा एक ने कथा सुनाओ समय यहां कट जाय।
दूजा बोला मेरे पेटे में चूहे दौड़ लगाय जी ।।

श्रम के बाद मिले जो खाना हिम्मत उससे आय।
कुछ भी यहां मिल जाये हमको कहा बड़े ने खाय जी ।।
खीच छाछ हो मेरे सामने जी भर उसको खाऊँ।
और नहीं कुछ इच्छा मेरी वही खा भूख मिटाऊँ जी ।।

खीच छाछ मिल जाये तो मैं राजा भोज बन जाऊँ।
इस वेला में और नहीं कुछ आज यहाँ मैं चाहूँजी ।।
कहे दूसरा पाँच सोकरे साग फली यदि पाऊँ।
विक्रम भूप सा खा पीकर के मैं तो फिर इतराऊँ जी ।।

बोला तीसरा पतले फुल्के सब्जी चार यदि आये।
फिर तो राजा सम्प्रति के सम शक्ति हम तो पाये जी ।।
नींबू, चटनी, पापड़, मिर्ची संग में यदि मैं खाऊं।
तो फिर राजा सम्प्रति ही मैं बनकर दौड़ लगाऊं जी ।।

तेज सिंह कहे मन के लड्डू कितने ही यहां बनाये।
घी शक्कर भी कम क्यों डालें चाहे जितने खायें जी ।।
मैं तो चाहूं, राज सिंहासन भोजन करूं यहां छत्तीस।
दूध दही के संग में सब्जी मिले मुझे अब तीस जी ।।

सुर सुन्दरियां कर मनुहारे भोजन यहां करायें ।
खड़ी दासियां पंखा डुलायें तब ही आनंद पाये जी ।।
सुनकर तीनों भाई क्रोध में लाल पीले हो जायें ।
कुछ कहना चाहे तब ही वहां पिता नजर आ जाये जी ।।
बच्चों बात हुई क्या बोलो गुस्सा कैसे आया ।
खड़े क्रोध में क्यों तीनों ही किसने है भड़काया जी ।।
कहा बड़े ने तेज सिंह को तुमने ही दिया बिगाड़ ।
लाड प्यार इसने ही अपना जीवन किया उजाड़ जी ।।
सुनले इसकी बात कोई तो कूप हाथ से जाय ।
फिर तो जंगल से लकड़ी ला बेच रोटी हम खाय जी ।।
सारी बात सुन पिता हृदय में क्रोध बड़ा ही छाय ।
तेरे कारण दशा हुई यह आज रहे पछताय जी ।।
उपालंभ दे दिया पिता ने और दिया फटकार ।
तेज सिंह सुनकर के मन में करने लगा विचार जी ।।
नहीं निभेगी इनके संग में छोड़ूं घर परिवार ।
सारे ही नाखुश हैं मुझसे नहीं रहने में सार जी ।।
इनके संग नहीं रहना मुझको चला दूर कहीं जाऊं ।
लिखा भाग्य में होगा मेरे वहीं वहां मैं पाऊँ जी ।।
संध्या को चलकर सारे ही घर अपने आ जायें ।
सो जाये सारे घर वाले निकल वह तो जाये जी ।।
ग्राम के बाहर पथ में उसने बैठा फणिधर पाया ।
रात चांदनी चमक रही थी तेज सिंह हर्षाया जी ।।
अच्छे शकुन हुए हैं मेरे हर्ष हृदय में छाये ।
भावि अच्छा होगा मेरा नाग देव बतलाये जी ।।
अभी अवस्था सोलह वर्ष की निडर होकर जाये ।
खुंख्वार पशु वनराज रीछ कई सम्मुख उसके आये जी ।।
पुण्य प्रबल होने के कारण पास न कोई आया ।
सारी रात चला निर्जन में नहीं वह घबराया जी ।।
भोर होते ही नगर रतनपुर में वह तो आ जाये ।
सोचे इसी शहर के अन्दर काम कोई मिल जाये जी ।।
बाजार बीच में सघन वृक्ष के तले बैठ वह जाय ।
शाला से आ रहे छात्र कुछ देख उसे रुक जाय जी ।।
कहा एक ने कहां से आये आगे कहाँ सिधाय ।
तेजवान लगते तुम भाई परिचय दो बतलाय जी ।।
वह बोला मैं दूर देश का तेज सिंह मम नाम ।
भाग्य भरोसे मैं आया हूँ मिले कोई भी काम जी ।।

परिचय पाकर पांच छात्र अब अपनी सलाह मिलाय।
तेजस्वी युवक है यह तो सहायक हम बन जाय जी ।।
आपस में बातें कर बोले हम ही इसे रख लेवें।
विद्यालय में काम हमारा सारा यह कर देवे जी ।।

एक एक रुपया हम पाँचों अपना यहाँ मिलावें।
पाँच रुपया माहवारी दे सेवक इसे बनायें जी ।।
सुनकर उनकी बात तेजसिंह त्वरित मान है जाये।
पाटी मार्जगिया कहकर बालक उसको सभी बुलावे जी ।।

पुत्र दीवान का पढ़ने हेतु शाला में आ जाये।
तेजसिंह से अपनी पाटी वह भी साफ कराये जी ।।
तेजसिंह सोचे मन ही मन काम से कीमत बढ़ती।
जी चुराये जो भी काम से कीमत उसकी घटती जी ।।

एक दिवस पाँचों ने देखा करते उसका काम।
वेतन तो हम देते इसको करे औरों का काम जी ।।
पांचों ने मिल कहा एक दिन तजे औरों का काम।
खबरदार यदि किया काम तो नहीं देंगे हम दाम जी ।।

दीवान पुत्र का नाम था सज्जन कुछ ही देर में आये।
साफ करने को अपनी पाटी रखकर के वह जाये जी ।।
थोड़ी देर में वापिस आया पाटी वैसी ही पाई।
कब से पाटी रखी हुई क्या देती नहीं दिखाई जी ।।

तेरे भरोसे छोड़ गया था तू ने दिया न ध्यान।
लगता मुझको तेरे मन में आ गया है अभिमान जी ।।
सुनकर उन पांचों में से एक आ करने लगा तकरार।
मुफ्त मांही मेहनत करवाते करते नहीं विचार जी ।।

सज्जन बोला क्या देते तुम अभी मुझे बतलाओ।
बहस पसंद मुझको नहीं भाई ज्यादा मत इतराओ जी ।।
पाँच रुपये हम पाँचों से यह हर महिने ही पाय।
सज्जन बोला पच्चीस रुपये हम इसको दिलवाय जी ।।

करना होगा काम मेरा ही सिर्फ यहां पर आकर।
पच्चीस रुपये अग्रिम तुमको देता हूँ हर्षाकर जी ।।
पच्चीच रुपये देख तेजसिंह मन में खुश हो जाय।
दबा अंटी में बोला वह तो काम मुझे बतलाय जी ।।
पाँचों वणिक पुत्र अब सोचें ईर्ष्या कर क्या लेना।
तेजसिंह का भला हो गया नहीं पड़ा हमें कुछ देना जी ।।

हम तो महाजन के बच्चे हैं धन नहीं व्यर्थ गुमायें।
अपना कार्य हम अपने हाथ से करके धन बचायें जी ।।
थोड़े काम का ज्यादा दाम अब तेजसिंह वहां पाये।
अच्छा खाना और पहिनना नित उसको तो मिल जाये जी ।।

तेजसिंह के तन की आभा वहाँ रहते हुए बढ़ जाये।
उसी शाला में राजकुमारी लीलावती भी आये जी ।।
सुन्दर-सुशील वह परम विदुषी पढ़ने में होशियार।
कुशल कला प्रवीण वह तो उत्तम रखे विचार जी ।।

महाराज ने लीलावती के ब्याह की बात चलाई।
महाराज जहाँ करे सगाई नहीं कँवरी मन भाई जी ।।
कँवरी लायक कँवर अभी तक नहीं नजर में आय।
मात-पिता के मन में चिन्ता दिन-दिन बढ़ती जाय जी ।।

राजकुमारी स्वयं बड़ी थी मन में उठते विचार।
मेरे योग्य धरा के ऊपर क्या नहीं राजकुमार जी ।।
सह शिक्षा थी शाला में पर रख पर्दे की आड़।
बच्चों को बिठलाया जाता कीला उसमें गाड़ जी ।।

बालक और बालिकाओं के बीच में पर्दा होय।
इस कारण से एक दूजे को देख सके नहीं कोय जी ।।
एक दिवस वहाँ प्रबल वेग से पवन अचानक आई।
पर्दा टूट गिरा धरती पर सब आँखें चकराई जी ।।
राजकुमारी अरु सज्जन की आँखें हो गई चार।
मन ही मन में एक दूजे का बढ़ा वहां तो प्यार जी ।।

पवनदेव ने आकर पर्दा कृपा करके आज हटाया।
एक दूजे को देखा हमने जीवन धन्य बनाया जी ।।
पुनः सेवकों ने आकर के पर्दा वहाँ लटकाया।
पर नैनों की भाषा को तो नैन समझ बस पाया जी ।।

अब दोनों ही पत्राचार से मन के भाव बताये।
कँवरी सोचे पवन देव फिर क्यों नहीं पर्दा गिराये जी ।।
महाराज को राजकँवर इक मन ही मन में भाया।
सभी तरह से योग्य समझ कर न्यौता यह भिजवाया जी ।।

राजकुमारी योग्य हमारी गुण कितने हम बतलायें।
राजकँवर पसंद हमें तो बरात सजा आ जाये जी ।।
राजकुमारी को महाराजा कुछ भी नहीं बताये।
कमी निकाले वह तो सबमें समय निकलता जाये जी ।।

प्रथम पत्र में राजकँवरी ने यह सन्देश भिजाया।
शब्द थोड़े पर भाव अधिक थे उसने यह लिखाया जी ।।

कृपण से पण छोड़ यहां, पा को दीजै जोड़ ।
यही आप देओ मुझे, अपने मन को मोड़ ।।

कँवर समस्या लिखकर दीनी तेजसिंह कर माय।
पाटी माजणिया सभी जानते रोक न कोई पाय जी ।।
अन्तःपुर में नहीं मनाई पत्र दिया है पहुँचाय।
पढा पत्र कंवरी ने भी अब लिख दिया यह भिजवायजी ।।

जहाँ पवन जाता नही, रवि शशि उदय न होय।
जहाँ घट ब्रह्मा न रचै, अबला मांगे सोय ।।

तेजसिंह पाटी माजणिया समझ बात सब जाय।
प्रेम बढ़ा है इन दोनों में स्पष्ट रहा दिखलाय जी ।।

राजकँवरी दीवान पुत्र के बीच में बढ़ी प्रेम की बात।
एक दूसरे की सूरत को देखे ये दिन रात जी ।।
बात पिता ने गुप्त रखी पर मां ने दिया बतलाय।
सत्य झूठ मैं नहीं जानती कहा दासी ने आय जी ।।

कंवरी सोचे शादी हो तो होवे सज्जन साथ।
सज्जन को ही मान लिया है मैंने मन का नाथ जी ।।
की थी सगाई महाराज ने आ गया वह तो राजकुमार।
सजी धजी बरात आ गई हो रही जय जय कार जी ।।

चैत्र कृष्णा अष्टमी रात्रि का लग्न लिया निकलाय।
राजकंवरी की आंखों में सुन अब तो अंधेरा छाय जी ।।
जीवन साथी के आपस में मिले न यदि विचार।
टूट जाये इक दिन तो निश्चित सचमुच वह परिवार जी ।।
पत्र एक लिख राजकँवरी ने सज्जन घर पहुँचाया।
आप बिना मैं रह नहीं सकती विकट समय अब आयाजी ।।
रात होते ही अश्व ले के तुम देवी के मन्दिर आओ।
समय नहीं है पास आज ही दूर देश ले जाओ जी ।।

वहीं अश्व पर मैं आऊँगी लेकर रत्नाभूषण साथ।
अश्वारूढ़ हो निकल जायेंगे समझाऊँ फिर बात जी ।।
तेजसिंह ने पत्र दिया है ला सज्जन को तत्काल।
पत्र पढ़ा तो अब सज्जन के मन की महकी डाल जी ।।
सारी बात को समझ तेजसिंह मन में किया विचार।
कहूँ यदि दीवान साहब को मानें निश्चित वे उपकार जी ।।

पता लगा यदि महाराज को देंगे वो हुक्म सुनाय।
पद और सम्पत्ति जब्त करा कर शूली दे चढ़वाय जी ।।
यही सोच दीवान पास जा सारी ही बात बताई।
सुनकर के दीवान के तन में भय से कँपकँपी आई जी ।।

तरुणाई का नशा सज्जन को मन में नहीं विचारा।
संस्कार में कमी रह गई सारा ही दोष हमारा जी ।।
वह बोला भाई तुमने तो मुझ पर किया उपकार।
सज्जन बदले तुम ले जाओ तो मानूंगा आभार जी ।।

सभी व्यवस्था हो जायेगी करलो तुम तो अब तैयारी।
सज्जन बदले तुम ही अब पाओ वह राजकुमारी जी ।।
बहुमूल्य सामान को सज्जन चुपके से भिजवाये।
खुशी खुशी में तेजसिंह सब अपने संग ले जाये जी ।।
दीवान साहब आकर के बोले सुनलो सज्जन राज।
तेरे खातिर रत्नाभूषण लाया था मैं आज जी ।।

उसे पहन कर देखो तुम अब रखा तिजोरी मांय।
सुनकर सज्जन के मन में तो खुशियाँ नहीं समाय जी ।।
लगा तिजोरी वह खोलने कक्ष के अन्दर जाय।
कक्ष बंद कर दिया बाहर से सज्जन अब पछताय जी ।।

पता तात को लग गया शायद अब क्या होगा हाल।
क्या सोचेगी राजकुमारी मन में बढ़ा मलाल जी ।।
पाटी माजणिये को दे घोड़ा बात सभी समझाय।
सावधानी से जाना तुमको पता नहीं लग पाय जी ।।

रात होते ही तेजसिंह अब मंदिर में आ जाय।
राजकुमारी अश्व चढ़ी आ उसको गले लगाय जी ।।
अब मत देर करो तुम प्रियवर अपना अश्व बढ़ायें।
भोर होने से पहले ही हम दूर निकल कर जायें जी ।।

रात चांदनी अश्व चढ़े वे आगे को बढ़ते जायें।
राजकुमारी बात पूछती वह हाँ हाँ कर बस जायेजी ।।
मौन धार कर दोनों ही सत्वर वन में बढ़ते जांय।
बहुत दूर वे निकल गये थे सूरज जब प्रकटाय जी ।।
भोर होते ही राजकुमारी बोली तुम हो कौन।
अब जाकर जाना है मैंने रहे रात क्यों मौन जी ।।
कँवर रह गये कहां मुझे सब सच सच वह बताओ।
वरना मरने के खातिर अब तैयार यहाँ हो जाओ जी ।।

तेजसिंह कहे सज्जन ने ही भेजा है सब समझाय।
राजकुमारी कहे वो करना लेना अपनी बनाय जी ।।
राजकुमारी मन में सोचे देकर के मस्तक हाथ।
मेरे भाग्य में लिखा यही है ये हो जीवन नाथ जी ।।
मैंने ही यह काम किया अब किसको देऊं दोष।
देश पराया अपना भी नहीं करूं मैं किस पर रोष जी ।।
आप कौन हैं मुझको अपना परिचय यहाँ करायें।
राजपूत मैं तेजसिंह हूँ आप न अब घबरायें जी ।।
दीवान पुत्र तो वैश्य यहाँ था यह असली सरदार।
दिखने में भी सुन्दर युवक करूं इसे स्वीकार जी ।।
लौटूं अपने नगर यदि तो देंगे लोग धिक्कार।
तात-मात भी पहले जैसा नहीं करेंगे प्यार जी ।।
इसी तरुण को अपना मानूं यही विधि का लेख।
लेकिन जल्दी उचित नहीं मैं करूं परीक्षा देखजी ।।
चलते चलते एक नगर अब उनको दिया दिखाई।
बाहर एक सरोवर देखा वहीं अश्व लिए थमाई जी ।।
कँवरी ने इक रत्न दिया है तेजसिंह के हाथ।
इसे बेचकर वापिस आओ करुं मैं आगे बात जी ।।
तेजसिंह ले रत्न त्वरित अब नगर हाट में आया।
पाँच जगह पर रत्न दिखाकर नौ लाख रुपया पाया जी ।।
कहा जौहरी से तेजसिंह ने कृपा यह भी करवाओ।
सुन्दर एक भवन मैं चाहूँ आप ही मुझे दिलाओ जी ।।
व्यवहार देखकर तेजसिंह का जौहरी खुश हो जाय।
एक एक कर नगर में सुन्दर भवन उसे दिखलाय जी ।।
सवा लाख में भवन लिया निज ताला वहां लगाया।
प्रसन्न मुद्रा में चढ़ा अश्व वह नगरी बाहर आया जी ।।
सारी बात बता कंवरी को कहा चलो मम साथ।
भवन मैंने क्रय कर लीना है करना वहीं पै बात जी ।।
तेजसिंह लीलावती दोनों ही नये भवन में आये।
देख भवन को राजकँवरी भी हर्षित होके सराहे जी ।।
घर की देख रेख करने को रखे दास और दासी।
तेजसिंह ने कहा आप अब तज दें सभी उदासी जी ।।
दोनों की ही तरुण अवस्था करे कँवरी वहाँ विचार।
जब तक शादी नहीं हो तब तक पालें शुद्ध आचार जी ।।

शयन कक्ष भी उन दोनों ने अपने अलग बनाये।
एक दूसरे की इच्छा बिन द्वार नहीं खुल पाये जी ।।
तेजसिंह से कहा एक दिन यह कहते नीतिकार।
स्रोत नहीं हो जल का तो फिर खूटे पारावार जी ।।

तेजसिंह कहे समझ गया मैं नहीं चिन्ता मन लाय।
कल ही जाकर राज सभा में उचित स्थान लूं पाय जी ।।
भोर से पहले उठा तेजसिंह किये सभी नित कर्म।
हाथ जोड़ कर ध्यान लगाया पाला अपना धर्म जी ।।

वस्त्राभूषण नूतन पहने कमर लटका तलवार।
आनंदपुर के भूप अजित की पहुँचा सभा मंझार जी ।।
हाथ जोड़ कर नमन किया है रत्न दिया उपहार।
खुश होकर के वहां भूप ने माना है आभार जी ।।

देकर के सम्मान तेज को आसन पर बिठलाय।
मेरे योग्य जो सेवा हो वह निर्भय बन फरमाय जी ।।
कँवर कहे मरुधरा से आया इस नगरी के मांय।
इच्छा मेरी आप शरण में काम मुझे मिल जाय जी ।।

नहीं अंग रक्षक अभी मेरा इसको ही लेऊँ बनाय।
ऐसा तरुण और बलशाली नहीं कहीं फिर पाय जी ।।
नाज मुझे है तुम पर भाई अंग रक्षक पद पाओ।
आज करो आराम सवेरे इसी समय पर आओ जी ।।

हजार असर्फी हर महिने ही राजकोष से पाओ।
कम है तो क्या लोगे मुझको साफ साफ बतलाओ जी ।।
महाराज जो देंगे मुझको वो ही है स्वीकार।
सेवा में रखकर के आपने किया बड़ा उपकार जी ।।

आज्ञा लेकर महाराज से निज घर को वह आय।
नापित की दूकान देखकर चला उसमें वह जाय जी ।।
नापित ने उच्चासन देकर सादर दिया बैठाय।
चतुराई से की है हजामत वह तेल इत्र लगाय जी ।।
पांच असर्फी तेज सिंह झट खुश होकर बक्षाय।
हुआ अचंभित नापित अब तो विस्मय मन में लाय जी ।।

आज तलक नहीं महाराज से इतना मैंने पाया।
महाराज से भी ज्यादा यह लगता मुझे सवाया जी ।।
तेज सिंह चल कर के वहां से अपने घर में आया।
कँवरी को सब बात बताकर वह बहुत हर्षाया जी ।।

कँवरी सोचे सचमुच मैंने वीर पुरुष ही पाया।
कर इससे विवाह बनूंगी मैं तो इसकी छाया जी ।।
उधर नाई ने पांच अशर्फी प्रथम बार थी पाई।
हुआ फूल कर कुप्पा वह तो खुशी खुशी घर जाई जी ।।

झूम रहा है मन ही मन में नहीं खुशी का पार।
नाईन बोली क्या जीता है किला कोई इस बार जी ।।
भाग्यवान तुम देखो अशर्फी पांच आज तो पाई।
विदेशी सरदार ने मुझको खुश होकर बक्षाई जी ।।

नाईन बोली क्या उनके है घर में कोई नार।
मैं भी उनकी सेवा करना मन से करूं स्वीकार जी ।।
पता लगाकर नाई आया सारी बात बताई।
सभी काम तज नाईन दौड़ी तेज सिंह घर आई जी ।।
कहा दासी ने अन्तःपुर में आप न जाने पाये।
जो कहना है मुझे बतादे कह रानी से आये जी ।।

पर्दे बाहर खड़ी हो नाईन अपनी बात बताय।
मैं नगरी की नाईन हूँ कुछ सेवा दो फरमाय जी ।।
मेंहदी मालिश नख शिख का सब काम मुझे बतलाये।
आशा लेकर आई घर से लाभ यहाँ मिल जाये जी ।।

अन्दर से कँवरी यह बोली नहीं अभी कुछ काम।
कँवरी सोचे मैं हूँ कंवारी नाईन यह बदनाम जी ।।
कुछ सेवा तो बक्षा दीजै आग्रह करती ही जाय।
लीलावती पर्दे में ही रह उसको यह फरमाय जी ।।

हाथ पाँव के नख ले लेओ यह कह हाथ बढ़ाय।
नाईन ने नख काटे सारे ही चतुराई दिखलाय जी ।।
चन्द्र अष्टमी का हो जैसे नख लिए वहां उतार।
फिर बोली मुझ दासी पर नित करें आप उपकार जी ।।

ब्रह्मचर्य का तेज पले फिर उत्तम कुल की नारी।
नख भी ऐसे चमक रहे ज्यों हीर कणी कोई प्यारी जी ।।
विदा समय में पाँच अशर्फी नाईन को दिलवाई।
नख के साथ अशर्फी लेकर नाईन घर को आई जी ।।
आकर पति से कहा आपसे अधिक यहाँ मैं लाई।
पाँच अशर्फी नख ये सुन्दर साथ लिए मैं आई जी ।।
चमक देख कर नापित बोला ये हीरकणी कहाँ पाई।
नाईन बोली ठुकरानी नख हीर कणी यह नाहीं जी ।।

अचरज में नापित ले नख को भूप पास में आया।
भूपति को नख की पुड़िया दे दूर खड़ा मुस्काया जी ।।
देख महिपति सोचे मन में नापित कहाँ से लाय।
हीरकणी के टुकड़े हैं ये कौन इसको दे जाय जी ।।
महिपति बोला—हीरकणी के टुकड़े कहाँ से लाया।
ऐसी सुन्दर हीरकणी को देख ना पहले पाया जी ।।
नापित बोला नख है राजन हीरकणी यह नाय।
अंगरक्षक की घर वाली के नाईन नख बतलाय जी ।।
सुनकर कामी राजा का मन चक्कर में पड़ जाय।
नख ही इतने सुन्दर हैं तो तन क्या रूप दिखाय जी ।।
जब तक उसको नहीं देख लूं जीवन है बेकार।
मेरे अन्तःपुर में उस सी नहीं है सुन्दर नार जी ।।
बोला नृप नापित अब तू ही कर कुछ यहाँ उपाय।
किसी तरह भी वह अप्सरा मेरे महल में आय जी ।।
दुर्बुद्धि नापित सुन बोला चिन्ता को दूर हटाय।
सहज हाथ ठकुरानी आये मेरे पास उपाय जी ।।
नापित मत तू देर लगा अब बतला त्वरित उपाय।
एक एक पल उसके बिना तो वर्ष समान लखाय जी ।।
नापित बोला नाथ आप फिर अपना ब्याह रचायें।
सेठ साहूकारों के घर जा आप बिन्दोला खायें जी ।।
प्रथम बिन्दोला अंग रक्षक के घर का लेव मान।
पास बुलाकर बतला देवें रखे नियम का ध्यान जी ।।
कहें नियम घर मालकिन ही लिए परोसा आय।
पंखा झले हमारे ऊपर तब ही हम खा पांय जी ।।
बात श्रवण कर नापित को नृप कंठ हार पहनाय।
आग लगाकर नापित नृप मन हर्षित हो घर आय जी ।।
नापित के जाते ही नृप ने मंत्री लिया बुलवाई।
अपने मन की बात मंत्री को सारी बतलाई जी ।।
सुनकर मंत्री कहे नाथ यह सलाह कहाँ से पाई।
किसी नीच ने लगता मुझको मन में आग लगाई जी ।।
प्रजा आपकी पुत्र-पुत्री सम क्यों यह उठा विचार।
नीच कर्म करने वालों को मिले नरक का द्वार जी ।।
महाराज लंका नगरी का हुआ है कैसे अन्त।
पर नारी के कारण रावण मरा कहें सब ग्रन्थ जी ।।

एक नहीं कितने ही किस्से बतलाते इतिहास।
कनक-कामिनी के कारण ही हुआ राज्य का नाश जी ॥
अपनी मर्यादा में रहकर भला प्रजा का कीजै।
जिसने आग लगाई उसको राज दण्ड यहां दीजै जी ॥
नृप को समझा कर के मंत्री निज घर को आ जाय।
पर राजा के मन पर उसका असर नहीं हो पाय जी ॥
एक पत्र कुसुमपुर स्वामी का उसने लिया लिखाय।
मेरी इच्छा कुसुम कँवरी को रानी आप बनाय जी ॥
अतः नारियल भेज रहा हूँ इसको ना लौटाय।
अक्षय तृतीया लग्न बड़ा शुभ ले बरात आ जांय जी ॥
एक दास को गुप्त रूप से बुला सभी समझाय।
पत्र नारियल राज सभा में लेकर कल आ जाय जी ॥
हां भरकर के वहाँ दास ने अपना शीश झुकाया।
हुआ दूसरा दिन वह तो अब राज सभा में आया जी ॥
नृप को उसने नमन किया फिर कर में पत्र थमाया।
लिखा हुआ क्या इस कागज में मंत्री ओर बढ़ाया जी ॥
ज्यों का त्यों पढ़कर के मंत्री अचरज मन में लाय।
कुछ कहता उससे पहले ही नृप स्वीकृति फरमाय जी ॥
सभा विसर्जन कर के राजा चला महल में आय।
प्रथम बिन्दोला अंग रक्षक के घर का दे बतलाय जी ॥
अंग रक्षक ने किया निवेदन नृप उसको समझाये।
स्वयं आपकी ठकुरानी का हाथ परोसा ही खाये जी ॥
तेज सिंह नहीं समझ सका क्या पाप है नृप मन मांय।
मुझे खुशी कि आप बिन्दोला प्रथम मेरे घर खांय जी ॥
तेज सिंह ने सोचा भूप तो है यहाँ पिता समान।
मेरे घर का भोजन लेंगे करूं मैं तो सम्मान जी ॥
हर्षित होकर तेज सिंह अब अपने घर आ जाय।
लीलावती को सारी बातें आकर वह बतलाय जी ॥
राजकुमारी समझ गई कुछ काला दाल के माँही।
भोले कंवर जी समझ सके ना धोखा गये हैं खाई जी ॥
राजा की नियत में अन्तर नजर मुझे तो आय।
परनारी का यहाँ परोसा क्यों कर नृप यह खाय जी ॥
विप्र एक तुम जाकर लाओ तोड़ हम अब घेरे।
लेनें हम दोनों को ही अब यहां विवाह के फेरे जी ॥

दोनों में विवाह हो गया बने नारी भरतार।
राजकुमारी कहे ढूंढ़कर लाओ बत्तीस युवा नार जी॥
बत्तीस तरह की पोशाकें भी बैठ के आज सिलाओ।
मन मांगे रुपये देकर के कारीगर यहां लाओ जी॥
तेजसिंह ने सेवक बुलवा बात सभी समझाई।
फिक्र न करना रुपयों की तुम काम अपना बनजाई जी॥
जैसा था निर्देश वहां पर काम सव ही हो जाय।
बत्तीस नारियाँ सज धज करके चली वहाँ पर आय जी॥
सब तैयारी हुई वहाँ पर अब हलवाई हैं आये।
बनी मिठाई कई तरह की सौरभ चहुँ दिश छाये जी॥
हुआ दूसरा दिन अब राजा दल बल लेकर आय।
तेजसिंह सम्मान सहित अव सबको ही ठहराय जी॥
बिछा गलीचा वहाँ अति सुन्दर नृप को दिया बैठाय।
पीछे पीछे नापित भी आ पास बैठ वह जाय जी॥
महामंत्री दास दासी सब उचित्त स्थान बिठवाये।
तेजसिंह खुद दौड़-दौड़ कर आसन वहां लगाये जी॥
लीलावती सामग्री लेकर नृप को परोस कर जाय।
वेश बदल कर पुनः मिठाई सबको वह रख जाय जी॥
वेश बदल आ जाये त्वरित वह पल की करे न देर।
नृप की आँखें चुधियां गई हैं देखे चारु मेर जी॥
नृपति-नापित चकित बने अव सोचे कितनी नार।
नहीं समझ में उन्हें आ रहा कहाँ फँसे इस वार जी॥
कुबुद्धि नापित ने चुपके पग पर घृत दिया डार।
पता अभी मुझको लग जाये कहां वात में सार जी॥
वस्त्र बदलकर वही आ रही या कोई दूजी नार।
नाई जान गया था नारी वही आई हर वार जी॥
भोजन करके नृप नापित संग चले महल में आय।
राजा बोला बत्तीस नारी देखी ध्यान लगाय जी॥
नापित बोला नाथ वहां पर सिर्फ एक थी नार।
त्वरित बदल कर वेश सामने आती वह हर वार जी॥
अब ऐसा उपाय करो कि नार वह मिल जाय।
नापित तुम ही मेरा जीवन देओ सफल बनाय जी॥
सरदार जहां तक जिन्दा स्वामी वात नहीं बन पाय।
तब तक नारी हाथ लगे नहीं नापित यह बतलाय जी॥

एक उपाय मेरे मन आया अंग रक्षक भिजवायें।
विवाह निमंत्रण देने को हम अंग रक्षक बुलवायें जी ।।
जहाँ आपके पूर्वज रहते चला वहाँ वह जाय।
आगे मैं सब कुछ कर लूंगा आप नहीं घबरांय जी ।।

सेवक भेजा तेज सिंह घर लिया उसे बुलबाई।
देने निमंत्रण मेरे पूर्वजों को तुम ही अब भाई जी ।।
जैसी आज्ञा महाराज की सब तैयारी करवायें।
घर जाकर के सभी व्यवस्था करके वापिस आयें जी ।।

घर आकर के निज नारी को सारी बात सुनाई।
लीलावती ने कहा नाथ फिर धोखा रहे हो खाई जी ।।
राजा की नियत है खोटी तुम्हें चाहे यहाँ हटाना।
नापित नीच लोभ में आकर चाहे तुम्हें मरवाना जी ।।

खैर आप अब सुनिये मेरी मणि यह ले जायें।
करके जाँच देखली मैंने शंका नहीं मन लायें जी ।।
एक योगिनी की सेवा से मणि मैंने यह पाई।
मुख में रखकर जो भी सोचें रूप वह बन जाई जी ।।

नृपति और नापित मिल तुमको चिता मांही बैठायें।
आप मणि मुख में रख भंवरा बन घर पर उड़ आयें जी ।।
तेज सिंह ले मणि पास में राज भवन में आया।
महाराज तैयार यहाँ मैं क्या प्रबन्ध कराया जी ?

महामंत्री मन सोचे अब मौत वीर की आई।
लेकिन जिसके पुण्य प्रवल हो मार सके कोई नाहीं जी ।।
महाराज दो मुझे निमंत्रण मुस्काकर मैं जाऊं।
खुश खबरी उन पूर्वजों की प्रभु कृपा से लाऊं जी ।।

नगर निवासी लगे सोचने चाल कोई है भारी।
तेज सिंह कैसे जायेगा सोचें सब नर नारी जी ।।
महाराज ने हुक्म दिया है चिता एक वनवाओ।
तेज सिंह को विठला करके अग्नि वहां लगाओ जी ।।

हाहाकार हुआ नगरी में यह तो है अन्याय।
मूर्ख राजा को कोई तो जाकर के समझाय जी ।।
तेज सिंह गाजे वाजे से श्मशान भूमि में जाये।
नृप नापित मंत्री के संग में नर नारी भी आये जी ।।

विठा चिता में तेज को लकड़ियां वहां लगाई।
आग लगते ही तेज सिंह तो भ्रमर वना उड़ जाई जी ।।

भ्रमर रूप बन उड़ा वहां से अपने भवन में आया।
जान बची और लाखों पाये महामंत्र मन ध्याया जी ।।
ज्यों ज्यों चिता वहां पर जलती नृप नापित मुस्काय।
नर नारी सोचें सज्जन जन काम औरों के आय जी ।।
नृपति नीच हुआ है अपना करता उल्टे काम।
इसके कारण आज हुआ है नगर यह वदनाम जी ।।
शोक समुद्र में डूबे जन सब बहे अश्रु की धार।
करें आज उपवास सभी जन सुनले प्रभु पुकार जी ।।
स्वर्ग मिले उस तेजसिंह को जिसने प्रण है पाला।
राजा की आज्ञा को उसने नहीं यहाँ पर टाला जी ।।
नृप ने नापित को चूमा है मिली सफलता भारी।
तेजसिंह जल गया आग में उठा लाऊँ वह नारी जी ।।
नापित बोला धीरज धरिये जल्दी नहीं है ठीक।
शनैः शनैः सब काम बनायें मिली मुझे यह सीख जी ।।
अंग रक्षक की घरवाली अभी आंसू रही है डाल।
उसके सम्बन्ध में नहीं करें अब स्वामी यहां सवाल जी ।।
तीन दिनों के बाद कँवर अब मन में करे विचार।
सलाह पत्नी की लेकर वह हो गया है तैयार जी ।।
भोर होने से पहले ही वह नगरी वाहर आया।
एक दास के साथ सन्देशा नृपति को भिजवाया जी ।।
पूर्वजों को दे के सन्देशा तेजसिंह वहाँ आये।
गाजे बाजे के संग उनको राजभवन ले जायें जी ।।
सुनी सूचना नगर निवासी दौड़ दौड़कर आय।
तेज सिंह को देख के सारे अपना शीश झुकाय जी ।।
नृपति ने नापित बुलवाया नहीं समझ मैं पाया।
तेज सिंह को बिठा चिता में हमने वहाँ जलाया जी ।।
नापित बोला नगर निवासी दौड़ दौड़ कर जांय जी।
गाजे बाजे से हम उसको संग अपने ले आंय जी ।।
तेज सिंह के चेहरे को लख भूपति विस्मय पाय।
तीन दिनों में स्वर्ग की आभा तेजसिंह पर आय जी ।।
नमन किया है तेज सिंह ने नृप मन करे विचार।
जीवित कैसे यह हो गया सचमुच चमत्कार जी ।।
नगर निवासी करें प्रशंसा बोलें जय जय कार।
मानव भव में देव तेज सिंह गुण का है आगार जी ।।
चढ़ा पालकी में उसको सव राजभवन में लाये।
सभा जुड़ी थी वहां बड़ी ही तेज सिंह हर्षाये जी ।।

कृपा आपने मुझ पर कीनी स्वर्ग देख मैं पाया।
पूर्वजों तक मैंने आपका वह निमंत्रण पहुँचाया जी ।।
सुख पूर्वक हैं पूर्वज सारे हाल आपका जाना।
मैं बोला जयकार कर रहा नृप का वहाँ जमाना जी ।।

न्याय नीति से महाराज नित अपना राज्य चलाय।
राजकोष भी भरा हुआ है प्रजा बड़ी सुख पाय जी ।।
मंत्री बोला स्वर्ग कैसा है डालो आप प्रकाश।
तेज सिंह ने कहा वहाँ पर रहता सदा उजास जी ।।

मणि माणिक के ढेर लगे हैं कोई ना हाथ लगाय।
सारी मिट्टी सोना उसकी देख के मन हर्षाय जी ।।
कहा आपके तात ने मुझको ले जाओ कुछ साथ।
लेकिन मैं दो रत्न ही लाया देनें आपको नाथ जी ।।

किया आपको याद उन्होंने हैं आने को तैयार।
नृप बोला फिर क्यों नहीं आये क्या उनके विचार जी ।।
बाल रीछ सम बढ़े हैं उनके आते वे शरमाय।
नापित कोई अच्छा राजन आप पहले भिजवाय जी ।।

बार बार मुझसे वे बोले जा के भूल ना जाय।
नाथू नाई महाराज का उसको यहाँ भिजवाय जी ।।
आवभगत की खूब ही मेरी कहा अभी रुक जायें।
समय विवाह का थोड़ा स्वामी कैसे हम रुक पायें जी ।।

राजा बोला ठीक बात यह मेरे मन को भाई।
नापित के संग मिलने उनसे चले स्वर्ग हम जाई जी ।।
नापित रत्न लेने के हेतु लिए थैले संग चार।
भर कर के इनको लाऊँ मैं देऊँ फिर उपहार जी ।।
महाराज ने कहा तेज सिंह जब तक हम ना आयें।
मेरे आने तक राजा का काम आप करवायें जी ।।

नगर निवासी ठाट बाट से नृप नापित ले जाय।
चिता के अन्दर बैठा उनको अग्नि दी है लगाय जी ।।
अग्नि जली चिता की तेज सिंह लेवे नृपति खींच।
महाराज तुम अभी न जाओ जाये वो ही नीच जी ।।

जलने लगा नाई तो चीखा अपना जोर लगाया।
अधजला चिता से रोता रोता बाहर वह तो आया जी ।।
परिजन लिटा खाट पर उसको अपने घर ले जायें।
दुर्मति नृप नाई से मिलने उसके घर पर आये जी ।।

गुप्त तरीका उससे पूंछे तुम बुद्धि यहां लगाओ।
ठकुरानी मिल जाये मुझको वह तरकीब बताओ जी ।।
मरण शय्या पर पड़ा है नापित कुबुद्धि दरसाय।
गोठ बाग में कर आयोजित जोड़े सहित बुलाय जी ।।

यह कहते ही नापित ने दम छोड़ दिया तत्काल।
उसे देखकर के भी नृप की गई नहीं बद चाल जी ।।
लम्पट पुरुष समझते हैं नहीं मान और अपमान।
जूते खाकर के भी समझे अपनी उसमें शान जी ।।
राजा ने अब दिया निमंत्रण गोठ में सारे आय।
सजोड़े सबको आना है हुक्म दिया फरमाय जी ।।

सजोड़े सरदारों ने आ डेरे दिये लगाय।
तेज सिंह भी लीलावती संग निर्भय हो आ जाय जी ।।
अलग अलग डेरों में वैठे खुशियाँ रहे मनाय।
तभी तेज अन्धड़ आया है तम्बू सब उड़ जांय जी ।।
नृप के संग सरदार सभी अब दृश्य देख घबराय।
भोजन-पानी लिए बिना ही लौट सभी घर जाय जी ।।

षट्‌रस भोजन सबके खातिर नृप ने था बनवाया।
अन्धड़ ने आकर के उस पर पानी वहाँ फिरायाजी ।।
गुड़ गोबर हो गया सभी कुछ शेष नहीं रह पाया।
भूखे प्यासे गये सभी घर अन्धड़ ऐसा आया जी ।।
तेज सिंह अरु लीलावती भी पहुंचे घर के मांय।
अपने हाथ में लीलावती वहां कंगन को नहीं पाय जी ।।

बाग के अन्दर सवा लाख का कंगन वह गिर जाय।
चिन्ता में पड़ राजकुमारी वहाँ खड़ी घबराय जी ।।
निश्चित गिरा बाग में होगा त्वरित वहाँ मैं जाऊं।
अभी ढूंढ कर महारानी का कंगन मैं तो लाऊं जी ।।

लीलावती कहे हुआ अंधेरा सुबह आप तो जायें।
तेज सिंह कहे दोनों को ही नींद नहीं फिर आये जी ।।
काले बादल घना अंधेरा नहीं पधारें नाथ।
लिखा भाग्य में तो मिल जाये मानो मेरी बात जी ।।

डेरा लगा हुआ था उसका कंगन वहीं मिल जाये।
लेकिन फाटक नगर द्वार का बन्द वह अब पाये जी ।।
कंगन रखकर अपनी जेब में खड़ा खड़ा वह सोचे।
घरवाली का कहा न माना बाल स्वयं के नोचे जी ।।

मना किया उसने तो मुझको नहीं मानी थी बात।
नगरी बाहर घना है जंगल उसमें काली रात जी ।।
कर रही होगी इन्तजार वहाँ घर में अकेली नार।
कैसे जाऊँ पास में उसके करने लगा विचार जी ।।

परकोटे के नीचे उसको नाला दिया दिखाई।
इसमें से होकर मैं जाऊँ लेऊँ कष्ट उठाई जी ।।
उतर नाले में उसने अपना जैसे ही कदम बढ़ाया।
विषधर एक वहाँ था बैठा नजर नहीं वह आया जी ।।

तेज सिंह को डस लिया उसने विष चढ़ता ही जाये।
होकर के बेहोश वह तो नाले में गिर जाये जी ।।
तेज सिंह बेहोश पड़ा यहाँ चेत नहीं रह पाय।
लीलावती के नयनों में भी नींद नहीं अब आय जी ।।

उधर एक लक्खी बणजारा नगर के बाहर आय।
द्वार बन्द होने से उसने वहीं डेरा दिया लगाय जी ।।
मदन मंजरी पुत्री उसकी सुन्दर और सुकुमार।
रूपवती-लावण्यमयी वह करे सभी से प्यार जी ।।

बणजारा निश दिन ही सोचे वर अच्छा मिल जाय।
करके पीले हाथ पुत्री को देऊं मैं परणाय जी ।।
एक दासी उसकी सेवा में सखी बनकर के रहती।
मदन मंजरी मन की बातें उसको सारी कहती जी ।।

कहे सखी से मदन मंजरी शहर देख हम आयें।
सोये हुए पिताजी मेरे टोक न कोई पाये जी ।।

कहा सखी ने द्वार नगर के बंद हुए हैं सारे।
इसीलिए तो हमने अपने डेरे बाहर डारे जी ।।
मदन मंजरी कहे जहां से नगर का नाला आय।
उसमें से ही होकर हम तो नगर देखने जांय जी ।।

निकल डेरे से दोनों सखियां आईं नाले पास।
एक पुरुष को पड़े वहां देखा चल रही जिसकी सांस जी ।।
मृत्यु भी आकर फिर जाये आयु जो लम्बी होय।
उस प्राणी की रक्षा करने आ जाये हर कोय जी ।।

मदन मंजरी देख के बोली नाग इसे डस जाय।
विष हरण जड़ी मेरे थैले में झट जा तू ले आय जी ।।
एक लोटे में भर कर पानी जल्दी से ले आओ।
प्राण बचाकर इसके जल्दी जग में पुण्य कमाओ जी ।।

गई डेरे में सखी वह तो औषधि लेकर आई।
घोल पानी में पिला दिया है विष विलीन हो जाई जी ।।
होश आते ही देखा सामने खड़ी है सुन्दर नार।
जीवन दिया आपने मुझको दीना जहर उतार जी ।।
देवी आप कौन बतलायें यहां कहां से आई।
मृत्यु के मुख में जाने से तुमने लिया बचाई जी ।।
निकल नाले से दोनों ही अब मन में करें विचार।
मदन मंजरी कहे सखी से यही मेरे भरतार जी ।।
गन्धर्व विवाह हो गया दोनों में रात निकल वह जाय।
भोर होते ही मंत्रित धागा कँवर को वह पहनाय जी ।।
गिरा कँवर के गले में धागा तोता वह बन जाय।
पूरे दिन शुक बना रहे वह रात में नर बन जाय जी ।।
मदन मंजरी तेज सिंह से मन अपना वहलाये।
तेज सिंह चाहकर भी उससे मुक्त नहीं हो पाये जी ।।

मदन मंजरी कहे पिता जब खुश मुझ पर हो जाय।
मौका देखकर अपने मन की देऊँ बात बताय जी ।।
सदाचार रख जीवन पाले करे ना ऐसा काम।
दाग लगे जिससे जीवन में हो जाये वदनाम जी ।।

कँवर पिंजरे के अन्दर रहकर अपना समय विताय।
बस नहीं चलता उसका कुछ भी समझ नहीं वह पाय जी ।।
मौका मिलते ही मैं उड़कर अपने भवन मैं जाऊँ।
लीलावती किस हालत मैं है देखूं तब सुख पाऊँ जी ।।

मदन मंजरी स्नान करे जब चावी रखे अपने पास।
पिंजरे का ताला तब खोले काम कोई हो खास जी ।।
स्नान किया फिर वाल सुखाने बैठी धूप में जाय।
कहा सखी ने तोते को भी लाकर दूं विठलाय जी ।।

मदन कहे यदि ध्यान रखने की ले तू जिम्मेवारी।
पोपट उड़ गया यदि हमारा बात विगड़े तब सारी जी ।।
हाँ भर कर उसने पिंजरे से पोपट लिया निकाल।
उड़ कर तोता बैठ गया है वहां वृक्ष की डाल जी ।।

अरे अरे उड़ गया वह तोता हाथ नहीं वह आय।
मुक्त तोते को वहां पकड़ने मदन वाज वन जाय जी ।।
आगे आगे तोता उड़ता पीछे उड़ता वाज।
सखी के कारण गिरी आज तो मेरे मन पर गाज जी ।।

तेज सिंह ने कन्या को लख पाणिग्रहण कराया।
क्षत्रिय सुता सुन्दरी को अब पत्नी वहां बनाया जी ।।
निकल रहे दिन बड़े चैन से पर बाहर ना जाये।
घर के बाहर इक हलवाई बस उससे मिल आये जी ।।
मित्र बन गया वह तो उसका करे प्रेम की बात।
तेज सिंह कहे मित्र ही देता सदा मित्र का साथ जी ।।

इक दिन तेज सिंह यह सोचे कर्म बड़े बलवान।
कहाँ से चलकर कहां आ गया कहाँ आगे का स्थान जी ।।
पाटी माजणिया बनकर पाई दो दो राजकुमारी।
क्षत्रिय सुता को ब्याहा मैंने ब्याही है बणजारी जी ।।

उन तीनों का हाल हुआ क्या कैसे पता लगाय ?
निकल कूप से जैसे कोई वापी में गिर जाय जी ।।
उधर लीलावती कान्त-कंकण की जोहे बाट।
उसे क्या मालुम तेज सिंह के अलग बने हैं ठाट जी ।।

राज घराने में जन्मी मैं थी वहाँ राजकुमारी।
लिखा भाग्य में क्या था मेरे टूटी सभी खुमारी जी ।।
पाटी माजणिया कर्म गति से मम जीवन में आय।
उसको अपना पति बनाया छुपा कहां वह जाय जी ।।

गये बाद में नहीं सूचना एक बार भी आई।
सब बहिनों को यही सलाह दूं इश्क करे वे नाहीं जी ।।
तात-मात की आज्ञा में रह जीवन सफल बनाय।
स्वछन्द भाव रखने वाली तो कष्ट हमेशा पाय जी ।।

भावावेश में सोच ना पाये आगे वे पछताय।
घर से भागी लड़की जग में इज्जत कभी न पाय जी ।।
दु:ख आने पर आंखें खुलती रोये झर झर रोज।
पति मेरे पंछी हो गये क्या कहाँ करूं मैं खोज जी ।।
अरे दासियों खोज करो तुम ग्राम नगर में जाय।
प्राणेश्वर को किसी शोक ने लीना क्या बिलमाय जी ।।

मदन मंजरी भी दासी को देती नित फटकार।
तेरे कारण उड़े हैं वे तो जाकर तू ही संभार जी ।।
चन्द्र कान्ता भी खास दासी को बात सभी समझाय।
प्राणनाथ बिन जीवन सूना तू जा पता लगाय जी ।।
सभी दासियां उन्हें ढूंढ़ती एक जगह पर आई।
हलवाई की हाट पे उनने भीड़ बड़ी ही पाई जी ।।

कँवर हाट के ऊपर बैठे लिया उन ने पहचान।
खुश होकर के पहुँच गई सब अपने अपने स्थान जी ॥
समाचार सुन कर लीलावती हर्षित हो मन माय।
रथ में चढ़कर वह तो त्वरित ही चली हाट पर आय जी ॥
बणजारिन भी चली आई है सखी से सुनकर बात।
मदन मंजरी ने आकर के पकड़ा तेज का हाथ जी ॥
खींच तान बढ़ गई हाट पर इक बालक दौड़ लगाय।
खींच रही है बहनोई को तीन सुन्दरी आय जी ॥
शृंगार सुन्दरी घर से निकली चली वहाँ पर आये।
मेरे पति को खेंच रहीं क्यों कारण मुझे बताये जी ॥
भीड़ जमा हो गई वहाँ पर तेज सिंह घबराय।
उत्तर बन ना उससे पाये हल्ला लोग मचाय जी ॥
एक सन्तरी पकड़ तेज को नृप आगे ले जाय।
चन्द्रकान्ता की दासी संग तीन नारियां जाय जी ॥
बात समझ कर नृप ने सोचा कँवरी वर लिया मान।
गधर्व विवाह किया है सबने पाया यही बयान जी ॥
अजित सेन कहे सुनो पुत्रियों मानों मेरी बात।
तेज सिंह से तुमको ब्याहूं बनकर सबका तात जी ॥
अति सम्मान से तेज सिंह को भवन मांही ठहराय।
दास दासियां सेवा करने उसकी अब आ जाय जी ॥
पंडित को बुलवाकर नृप ने लग्न लिया निकलाय।
शुभ मुहूर्त में चारों को ही देऊं मैं परणाय जी ॥
शृंगार सुन्दरी मुझ से ज्यादा इन्हें यहाँ पर भाई।
इससे प्यार लगता इनको याद न अपनी आई जी ॥
शृंगार सुन्दरी बोली बहिनों सुनलो मेरी बात।
मेरे ही कारण तुम तीनों खड़ी हो मेरे साथ जी ॥
मेरे घर के बाहर बोलो नहीं होता हलवाई।
ये नहीं जाते तो बतलाओ कैसे लेती पाई जी ॥
तेज सिंह कहे आप सभी का नहीं है रत्ती दोष।
कर्मों को कारण तुम जानो करो नहीं अफसोस जी ॥
किस्मत में यह कष्ट लिखा था मैंने उसको पाया।
लेकिन तुम सबके मिलने से मन मेरा हर्षाया जी ॥
प्रेम भरी बातें कर पाँचों ही सारी रात बिताय।
रात ढल गई हुआ सवेरा पता नहीं चल पाय जी ॥

प्रातःकाल सब शय्या तजकर जपने लगे नवकार।
तेज सिंह ने सबको सिखाया मंत्र करे उद्धार जी ।।
संवर सामायिक स्वाध्याय कर जीवन सफल बनाओ।
चारों ही रह बड़े प्रेम से घर परिवार चलाओ जी ।।
सदा भूप भी तेज सिंह को सभा माहीं बुलवाय।
जटिल फैसला तेज सिंह के सन्मुख रख सुलझाय जी ।।

तेज सिंह की बुद्धि को लख जन मन आनंद पाय।
पूरे नगर में ख्याति फैली जनता खुशी मनाय जी ।।
धर्म घोष आचार्य पधारे मुनि पाँच सौ साथ।
धर्म कर्म तप आराधन में वे तो जग विख्यात जी ।।

आये विचरते आनंदपुर में ठहरे बाग मंझार।
विद्युत गति से फैल गया है उत्तम समाचार जी ।।
सुनकर जनमन आनंद छाया दर्शन को सब जांय।
चरणों को छूकर सब उनके जीवन धन्य बनांय जी ।।

सन्तों के दर्शन करने से हृदय कमल खिल जाय।
दुष्ट हृदय सन्तों के दर्शन करने को ना जाय जी ।।
अजीत सिंह भी करने दर्शन निकले ले परिवार।
तेज सिंह भी पीछे चलते संग नारियां चार जी ।।

वज रहे नोबत और नगारे कार्य शुरू हो जाय।
राजा और उमराव निमंत्रण पाकर के सब आय जी ।।
तेज सिंह की जान सजी है लोग देखने जाय।
हाथी, घोड़े, रथ पैदल कई देख अचंभा आय जी ।।

चारों के संग वड़े ठाठ से शादी अव हो जाय।
अजित सेन नृप खूव द्रव्य दे विदा उन्हें करवाय जी ।।
मन ही मन में राजा सोचे बुद्धि गई मम मारी।
नापित के चक्कर में पड़कर वन गया दुर्व्यवहारी जी ।।

कितना कष्ट दिया था मैंने चिता माहीं रखवाया।
क्षमा मांगने तेज सिंह के चला पास नृप आया जी ।।
तेज सिंह कहे कुसंगत से छाया हृदय विकार।
होने वाली नहीं टलती है तज दें आप विचार जी ।।

धुला मैल अजीतसिंह का नैन आंसू भर आय।
खुशी खुशी से तेजसिंह को विदा वह करवाय जी ।।
चार नारियां संग में लेकर चला भवन में आय।
दास दासी ने सारे भवन को दिया वहाँ सजवाय जी ।।

बड़े कक्ष में देवांगना सम खड़ी नारियाँ चार।
सुन्दर वस्त्र सभी ने धारे कर सोलह श्रृंगार जी ॥
लीलावती मुस्काकर बोली क्या कहूँ मन की बात।
कंकण को लेने निकले फिर कहां गये हे नाथ जी ॥

तेज सिंह ने अपनी जेब से कंकण दिया निकाल।
आगे क्या हुआ तुम ही सुनलो इनसे मेरा हाल जी ॥
मदन मंजरी कहे बहिन इन्हें तव काले नाग ने खाया।
दैव योग से मिल गये मुझको मैंने प्राण बचाया जी ॥

कितने पुरुष कठोर होते हैं भूल गये उपकार।
वना के तोता मैंने पाला किया हृदय से प्यार जी ॥
लेकिन मुझसे भी उकता कर उड़े गगन की ओर।
चन्द्रकान्ता बहिन के आगे चला न मेरा जोर जी ॥

चन्द्रकान्ता कहे स्वामी ने नाता मुझसे जोड़ा।
लेकिन कूद महल से इनने मुझे अकेला छोड़ा जी ॥
वन्दन करके वैठ गये सब गुरुवर यह फरमाय।
दुर्लभ मानव जीवन पाया निकल न यूं ही जाय जी ॥

जीव कर्म जैसे करता है वैसे ही फल पाये।
कर्म कटे विन कभी आतम को चैन नहीं मिल पाये जी ॥
सुख-दुःख हानि-लाभ कर्म के कारण मानव पाता।
कर्मों के कारण ही जग में कष्ट वह नित पाता जी ॥

तभी भूप ने वहां खड़े हो कहा गुरु महाराज।
संशय मेरे दिल में छाया उसे मिटा दें आज जी ॥
तेज सिंह ने पूर्व भव में क्या शुभ कर्म हैं कीने ?
साधारण जन से उठकर जो राज पुरुष पद लीने जी ॥
आचार्य श्री देख ज्ञान से संशय दिया मिटाय।
शुभ कर्मो के कारण इसने लिया उच्च पद पाय जी ॥

शान्तिपुर में सेठ पुरन्दर साधारण स्थिति पाये।
न्याय नीति से काम करे नित थोड़ा वहुत कमाये जी ॥
एक दिवस घृत का घट लेकर आ रहा अपने ग्राम।
तरु की छाया में आकर के करने लगा विश्राम जी ॥

राह भटक कर तीन मुनिवर चले उधर ही आय।
सेठ पुरन्दर उन्हें देख कर हर्षित मन हो जाय जी ॥
विधिवत वन्दन करके वोला मुझ पर कृपा करांव।
प्रासुक घृत यहां पड़ा हुआ है लेवो हे मुनिराय जी ॥

तेज सिंह के जाते ही अब दशा वहाँ पलटाय।
खेती सूखी काम नहीं कुछ घर वाले दुःख पाय जी ।।
खेत कुए सारे बिक जायें रहे न कुछ भी पास।
तेज सिंह के साथ चला गया उस घर का उल्लास जी ।।
तात कहे जिस दिन तेजू ने साथ हमारा छोड़ा।
तब से ही इस घर में देखो पड़ा अन्न का तोड़ा जी ।।

पास नहीं कुछ भी खाने को कैसे काम चलाय।
मजदूरी भी नहीं मिलती है छोड़ ग्राम को जाय जी ।।
पास नहीं है एक भी पैसा नही मुठ्ठी भर धान।
हिम्मत करके निकल गये सब भज मन में भगवान जी ।।

मात-पिता त्रय पुत्रों के संग बहुएँ तीनों साथ।
आंखों में आंसू भर माता बोली कर्म की बात जी ।।
कर्म कहाँ ले जाय जीव को देते कष्ट अपार।
कभी गर्व अब करे ना कोई गर्व बड़ा दुःखकार जी ।।

जमींदारी का सुख भी देखा छिनते दुःख भी देखा।
इन कर्मों का लिखा प्रभु के पास हमारा लेखा जी ।।
भूखे पेट चले वे सारे आगे बढ़ते ही जांय।
कुछ मजदूरी मिल जाती ला चना चबेना खाय जी ।।
चलते चलते आनंदपुर की बात कान में आई।
श्रमिक चाहिए वहां हजारों नृप तालाब खुदाई जी ।।
जल्दी जल्दी कदम बढ़ाये आनंदपुर आ जाय।
अधिकारी से बातें कर वे काम सभी पा जांय जी ।।

मजदूरी मिल गई सभी को खुशियाँ मन में छाई।
धन्य धन्य ऐसे राजा को करे प्रजा भलाई जी ।।
एक माह में एक बार ही नृप आवे उस ओर।
आने पर फैले राजा के जय जय का तब शोर जी ।।

जाँच करे मजदूरों की वह कितने यहाँ लगाये।
कितने काम पुराने करते कौन नये हैं आये जी ।।
सूची देख के तात-मात संग भ्रात नाम है पाया।
तीन भाभियां काम करें यहां समझ नहीं वह पाया जी ।।
इतनी दूर मजदूरी को कैसे भला वे आये ?
हो सकता है एक नाम के और कोई हो आये जी ।।
मन में संशय उमड़ रहा है कहे वह फिर बात।
इन आठों को राज भवन लेकर आओ साथ जी ।।

चढ़ के अश्व पर तेज सिंह अब राज भवन आ जाय।
सेवक उन आठों को लेकर चला पीछे अब आय जी ।।
तेज सिंह पहचान गया अब नहीं ये कोई हैं और।
तात-मात, भाई सब देखे उनको करके घोर जी ।।
दशा हो गई इनकी कैसी हा निर्धनता की मार।
हाथ जोड़ कर कहा तात ने क्या हुक्म हमें सरकार जी ।।
भूल हो गई हो तो हमको क्षमा आप कर दीजै।
लेकिन हमको मजदूरी देने से मना न कीजै जी ।।
शान्त भाव से नृप ने पूछा परिचय आप बताय।
कहाँ से आये इस नगरी में श्रम का भाव जगाय जी ।।
कहे रावजी राजपूत हम शूर सिंह मम नाम।
यह ठकुरानी तीन पुत्र संग बहुएं करते हैं काम जी ।।
मरुधर देश से हुआ है आना सब कर्मों का खेल।
भाग्य भरोसे इस जीवन को रहे यहाँ हम ठेल जी ।।
भला करे भगवान आपका खोल दिया जो काम।
अमर रहेगा युगों युगों तक यहाँ आपका नाम जी ।।
कहते कहते राव साहब के नयन नीर आ जाय।
बात हुई क्या मुझे बतायें अश्रु नहीं ढुलकाय जी ।।
अन्न दाता क्या कहूँ आप से कहते मन दुःख माय।
तेज सिंह मम छोटा बेटा जा के कहीं बस जाय जी ।।
माता उसकी हुई बावली माने जीवन बोझ।
दूर दूर जाकर मैंने भी की है राजन खोज जी ।।
जब से छोड़ गया वह हमको कष्ट सभी हम पाय।
निर्धनता घर में आ बैठी नहीं पेट भर खाय जी ।।
क्या कारण था पुत्र आपको तज कर के भग जाय।
आदि से ले अन्त तलक अब सारी बात बताय जी ।।
बड़े भाई ने कहा उसे कुछ क्रोध हृदय में लाय।
उसी रात में निकल गया कुछ पता नहीं लग पाय जी ।।
तेज सिंह कहे होनी को यहां टाल सके ना कोय।
सब अच्छा हो जायेगा फिर दुःखी आप ना होय जी ।।
परिचय मैंने पाया आपका ठहरें महल हमारे।
बड़ी दूर से काम के खातिर आप सभी पधारे जी ।।
अन्तःकरण से कहे रावजी धन्य हमारे भाग।
हमको दर्शन हुए आपके जागा सबका भाग जी ।।

आशीर्वचन अनेकों देकर वे अब शीश झुकाय।
अनुचरों को आदेश दिया है महलों में ठहराय जी ।।
तेज सिंह पहचान गया पर वे ना सके पहचान।
भाग्य हमारे आज बनें हम नृप के सब मेहमान जी ।।
तेज सिंह से आज्ञा लेकर महलों में वें जांय।
कक्ष अतिथि सजा हुआ है उसमें ही ठहरांय जी ।।

स्नान ध्यान उनको करवाया वस्त्राभूषण पाय।
राजा बड़ा दयालु है यह भोजन सरस कराय जी ।।
इधर तेज सिंह बुला मंत्री को बात सभी समझाय।
समतल भूमि बना आज ही तम्बू बड़ा लगाय जी ।।

उस तम्बू में पांच खण्ड भी सुन्दर वहां बनाओ।
एक खण्ड में खींच थाल भर छाछ मांड रखवाओ जी ।।
सात सोकरे साग फली का दूजे खण्ड में धर दो।
साग-फुलके हों तीजे खण्ड में यह व्यवस्था कर दो जी ।।

पापड़-चटनी के संग उसमें रखना जल की झारी।
चौथे में छत्तीस भोजन हों करो आप तैयारी जी ।।
सभी व्यवस्था हो जाने पर एक एक बुलवाय।
क्रम से अपने भाई को नृप बुला वहां भिजवाय जी ।।
अन्तिम खण्ड में एक ओर दो सिंहासन लगवाय।
माता-पिता को उनके ऊपर मंत्री जा बिठलाय जी ।।
रखे जहाँ पर छत्तीस भोजन संग नारियां जांय।
स्वयं करे अब भोजन जाकर सब नारी सेवा मांय जी ।।

एक हाथ से पंखा करती दूजी रखती थाल।
जल झारी तीजी के कर में चौथी धरती माल जी ।।
इच्छित भोजन देख के भाई दंग सभी रह जांय।
मात-पिता सिंहासन बैठे समझ नहीं कुछ पांय जी ।।

याद सभी को अब आई जो की है कुए पर बात।
तेज सिंह ही इच्छा जाने लगता नृप ही भ्रात जी ।।
तेज सिंह ने पर्दा खेंचा एक खण्ड बन जाय।
सारे भाई तेज सिंह को देख देख सकुचाय जी ।।

तेज सिंह अरु चार रानियां सत्वर उठकर जाय।
मात-पिता के चरणों में जा अपना शीश झुकाय जी ।।
शंका मेरे मन में बेटे सभा भवन माहीं हो जाय।
लेकिन संशय का पर्दा मैं नहीं हटा वहां पाय जी ।।

तात-मात दोनों ही उठकर सुत को गले लगाय ।
खुशी के मारे माता टप टप अश्रु रही टपकाय जी ।।
बिना तेरे मैं कितनी रोई हाल हुआ बेहाल ।
कब आयेगा मेरा बेटा करती नित्य सवाल जी ।।
सीने से सुत लगा लिया है चूम रही अब माथ ।
आज खुशी है मुझको बेटे देखी बहुएं साथ जी ।।

तेज सिंह अब सब भाई को अपना शीश झुकाय ।
चारों बहुएं क्रम क्रम से जा आशिष सबसे पाय जी ।।
सारे भाई रहे प्रेम से भवन दिये संभलाय ।
तेज सिंह अब तात-मात को अपने संग ठहराय जी ।।

चारों भाई तात-मात को निश दिन शीश झुकाय ।
कोई समस्या हो तो तात को देते आ बतलाय जी ।।
दे जागीरें सब भ्राता को तेज सिंह सकुचाय ।
अनुज आपका मैं अग्रज भेद ना मन में लाय जी ।।

सब भ्राता सम्पन्न हो गये पा कर के अधिकार ।
मात-पिता सबको देते अपना पूरा प्यार जी ।।
पुण्यवान सबका सुख देखे पाकर जग में ज्ञान ।
सम्पत्ति तो आनी जानी है करो उसे सब दान जी ।।
करे कोई उपकार आपका भूल न उसको जाओ ।
कृतघ्न भाव अपने मन में मत कभी आप तो लाओ जी ।।
इक दिन मात-पिता को आकर तेज सिंह यह बोले ।
तात-मात मन की इच्छा हो वही बात सब खोले जी ।।

इच्छा आपकी पूर्ण करूं मैं पुत्र तभी कहलाऊँ ।
पूछा तुमने पुत्र आज तो भाव मेरे बतलाऊँ जी ।।
ग्राम हमारा जब्त हुआ जो वापिस उसको पायें ।
लोगों के मन में शंका हो उसको जाके मिटायें जी ।।

लोग सोचते होंगे राव का नष्ट हुआ परिवार ।
उनकी शंका दूर करूं मैं आये सदा विचार जी ।।
जननी जन्म भूमि की बेटे याद किसे नहीं आय ।
स्वर्ग में रहकर जन्म भूमि भूल न कोई पाय जी ।।

तेज सिंह कहे तात आपका स्वप्न करूं साकार ।
जन्म भूमि मैं भूल न पाया याद करूं हर वार जी ।।
महामंत्री से की है मंत्रणा सेनापति भी आय ।
सारंग पुर को विजय करो तुम दिया उन्हें समझाय जी ।।

आज्ञा पाकर सेनापति ने की सेना त्वरित तैयार।
हाथी, घोड़े, रथ, पैदल हैं संग में कई हजार जी ॥
मात-पिता अरु चार रानियां बैठे रथ में जाय।
हाथी ऊपर तेज सिंह चढ़ आगे कदम बढाय जी ॥
सारंगपुर के बाहर आकर डेरा दिया है डाल।
मधुकान्त नृप डर कर खुद करने लगा सवाल जी ॥
इतनी भारी सेना लेकर कौन यहां नृप आया ?
राज्य छीन ना ले यह मेरा मन ही मन घबराया जी ॥
दूत भेज कर तेज सिंह ने पत्र दिया भिजवाय।
अगर भला तुम चाहो अपना पड़ो चरण के माय जी ॥
बात नहीं मंजूर अगर तो रण भूमि में आओ।
राज्य तुम्हारा निश्चित जाये अपने प्राण गंवाओ जी ॥
दूत सभा में पहुँच भूप की बोला जय जयकार।
आनन्द पुर महाराज का लाया मैं तो समाचार जी ॥
रखा भाले की नोक के ऊपर पत्र को वहाँ बढ़ाया।
महाराज ने मंत्री से कह पत्र को तुरन्त पढाया जी ॥
सारंगपुर नरेश आपको है आदेश हमारा।
झुके मेरे चरणों में आकर आज ही शीश तुम्हारा जी ॥
मधुकान्त नृप की आँखों में लाल डोरे तन जाय।
बोला आनन्दपुर का राजा अपना शीश झुकाय जी ॥
कहा दूत ने आज्ञा मानलो भला जो अपना चाहो।
महामंत्रीजी तुम नृप को तनिक यहाँ समझाओ जी ॥
दूत बात सुन मधुकान्त को क्रोध बड़ा ही आय।
अरे दूत क्या बोल रहा है मिलूं मैं रण में आय जी ॥
अवध्य दूत होते हैं वरना देता मैं मरवाय।
जाकर कह दे निज स्वामी से मौत तुम्हारी आय जी ॥
दूत लौटकर वापिस आया सारी बात सुनाई।
होवे फैसला रण आंगन में झुके यहाँ वे नाहीं जी ॥
तेज सिंह नृप करे तैयारी चक्र व्यूह बनवाये।
मधुकान्त नृप सेनापति को दूत भेज बुलवाये जी ॥
महामंत्री बोला राजन करलो सन्धि की बात।
हम से कई गुना हैं सैनिक आनन्दपुर नृप साथ जी ॥
युद्ध हुआ तो जन धन हानि अधिक हमारी होय।
सब कुछ मिट्टी में मिल जाये बचा सके ना कोय जी ॥

युद्ध करने से मुझको राजन लगे ना कुछ भी सार।
आप चार विद्वान भेज कर पता करें इस बार जी ॥
तत्क्षण चार चले हैं ज्ञानी भेद सभी ले आय।
संबलपुर के राव शेर सिंह जन्म भूमि को जाय जी ॥
पुत्र तेज सिंह आनंदपुर का बना हुआ महाराज।
आपके कुल में ऐसा भूपति करें आप तो नाज जी ॥

मधुकान्त नृप खुश होकर के चढ़ हाथी पर जाय।
शेर सिंह को शीश झुकाकर अपने गले लगाय जी ॥
खूब किया है आदर उसने राजभवन में लाय।
तेज सिंह को कहा चूम के कुल तुमने दीपाय जी ॥

मधुकान्त नृप मन में सोचे नहीं मेरे सन्तान।
राज्य तेज सिंह को देकर मैं करु आत्म कल्याण जी ॥
महामंत्री से चर्चा करके निर्णय दिया सुनाय।
सारंगपुर का राज्य संभालें मुझे मुक्त करवाय जी ॥

शुभ मुहूर्त में तेज सिंह बना सारंगपुर अधिकारी।
मधुकान्त नृप प्रभु भजन में देवे समय गुजारी जी ॥
सम्बलपुर जा शेर सिंह ने डेरा दिया लगाय।
महाराज के दर्शन करने चले लोग सब आय जी ॥

सम्बलपुर के नगर निवासी उत्सव बड़ा मनाय।
तेज सिंह मिल सब साथी से खुशी हृदय में पाय जी ॥
कुछ दिन अपने नगर में रहकर सारंगपुर सब आये।
राज्य मंत्री को संभलाकर आनंदपुर वह जाये जी ॥

मात-पिता की सेवा करते रहे हैं दिन अब बीत।
प्रजा हितैषी तेज सिंह के गूंजे घर घर गीत जी ॥
चारों रानियाँ चार पुत्र पा हर्षित मन के माय।
महि, राज और देव-मदन नाम दिये रखवाय जी ॥

बड़े होने पर पढ़ने हेतु भेजे गुरु के पास।
सभी कलाएं उन्हें सिखाये दे पूरा अभ्यास जी ॥
एक दिवस आचार्य सुव्रत जी नगर बाग में आये।
राजा, प्रजा, रावजी सारे दर्शन करने जाये जी ॥

भरी सभा में धर्म वाणी आचार्य देव फरमाय।
यह संसार असार जानकर त्याग भाव मन लाय जी ॥
विन चारित्र ना मुक्ति होवे बात हृदय लो धार।
छोड़ सभी प्रपंच भविजन ले लो संयम भार जी ॥

धर्म वाणी सुन राव दम्पत्ति तत्क्षण किया विचार।
तेज सिंह से बोले सुत हम लेंगे संयम भार जी।।
पुत्र कहे हे तात आप क्यों जग से मुख को मोड़ें।
मुझे अकेला इस जग में अब तात आप ना छोड़ें जी।।
मैं भी संयम लूंगा संग में करुं आत्म उद्धार।
गुरु वाणी सुन जान लिया है झूठा यह संसार जी।।

मात-पिता संग तेज सिंह भी संयम भाव जगाय।
लेकिन तेरा समय अभी नहीं तात मात समझाय जी।।
पौत्र हमारे अभी हैं छोटे उनको और पढाओ।
प्रजा हिषैषी बने वे चारों मन में भाव जगाओ जी।।

तात-मात की बात मानकर करे वह स्वीकार।
मात-पिता के संग अब संयम लेवे कई नार जी।।
बड़े ठाट से गुरु पास जा संयम भार है लीना।
खुले हाथ से शेर सिंह ने दान बहुत ही कीना जी।।

गुरु-गुरुणी के पास रहे सब करें ज्ञान अभ्यास।
संयम के कारण सबके मन छाया है उल्लास जी।।
तेज सिंह दोनों ही राज्यों पर देता पूरा ध्यान।
प्रजा हितैषी काम करे वह दे सबको सम्मान जी।।

जल में कमल रहे वैसे ही रहते नृप व रानी।
पांचों दया धर्म को पालें रहे सत्य के ध्यानी जी।।
चारों पुत्र बड़े होने पर अपने पास बुलाय।
महिपाल को सारंगपुर का राज्य दिया संभलाय जी।।

आनंदपुर का देवपाल को राजा वहां बनाया।
छोटे दो पुत्रों को जागीर के संग द्रव्य दिलाया जी।।
चारों भाई रहे प्रेम से कष्ट न कोई पाये।
एक दूसरे से मिलने को समय समय पर जाये जी।।

सबको कर सन्तुष्ट तेज सिंह गुरु शरण में जाय।
समय आ गया अब तो स्वामी अपना शिष्य बनाय जी।।
करे अहर्निश धर्म साधना बैठ गुरु के पास।
चारों रानियों के मन छाया पूरा धर्म उजास जी।।

कहा गुरु ने समय आने पर आयें नगर तुम्हारे।
संयम लेकर हो जाना फिर तुम भी साथ हमारे जी।।
उधर राव जी ने दीक्षा ले पाया सम्यग ज्ञान।
केवल ज्ञानी बनकर जग में किया आत्म कल्याण जी।।

आनन्दपुर में गुरुवर के संग आये केवलज्ञानी।
नगर बाग में ठहर गये वे दर्शन के सुजानी जी॥

नृप अपनी प्रजा के संग में दर्शन करने जाय।
धर्म परिषद में केवली भगवन सबको यह बताय जी॥

शुभ कर्मों को करके बन्धु जीवन सफल बनाओ।
त्याग भावना धारो मन में मैत्री भाव अपनाओ जी॥

स्वार्थ त्याग कर सब जीवों का करें आप कल्याण।
करुणा जिसके मन आये वह करे आत्म उत्थान जी॥

क्षण भंगुर यह जीवन कानो धर्म हृदय लो धार।
बिन संयम इस भव सागर से कोई जाये ना पार जी॥

सुनकर वाणी नृप उठ बोला शरण चरण में दीजै।
मेरे मन संयम भाया है कृपा आप अब कीजै जी॥

तेज सिंह और चार रानियां संग में कई नर नार।
सभी केवली के चरणों में लीना संयम भार जी॥

तेज सिंह मुनि जप तप करके घातिक कर्म हटाय।
वे भी केवल ज्ञानी बनकर मुक्ति जग से पाय जी॥

कर्मवीर जब ज्ञान जगाये धर्मवीर हो जाय।
जप, तप, त्याग भाव के कारण सिद्ध बुद्ध कहलाय जी॥

प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे नर भव सभी सुधारे।
भव सागर से संयम नैया सबको पार उतारे जी॥

दो हजार छियाली जेष्ठ की कृष्णा बारस-बृहस्पतिवार।
पादु खुर्द में छः ठाणों से छाया मंगलाचार जी॥

काव्य कथा लिख कर अन्तर में धर्म की ज्योति जलाई।
पढ़ने सुनने वाला लेवे जीवन सफल बनाई जी॥

धर्म ध्यान से मानव भव के सुधरे सारे काम।
त्याग-तपस्या करके जपलो अर्हम् अर्हम् नाम जी॥



२ | सुकृत का फल

(तर्ज : नेम जी की..............)

साथ जो सुकृत ले आये ।
वही नर सुख-सम्पत्ति पाये ।

हाथ सब खाली ही आये, पुण्य से जग में मिल जायें ।
माता के दूध उतर आये, लुटा वह ममता हर्षाये ।

कोठी सेवक मोटरें, मित्र और परिवार ।
सेवा में रहते खड़े, आज्ञा पालन हार ।।

कहो ये कैसे मिल जाये, वहीं नर सुख-सम्पत्ति पाये ।।१।।

सुकृत की महिमा वड़ी महान, जानले देकर मानव ध्यान ।
पूर्वकृत मिले समय पर आन, अच्छे का अच्छा फल लो जान ।

उलटे का सुलटा वने, अनहोनी हो जाय ।
घटना कव कैसे घटे, पता नहीं चल पाय ।।

दु:ख में भी सुख को पा जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।२।।

जम्वू द्वीप के भरत क्षेत्र मांही, ताम्रलिप्ति नगरी सुखदायी ।
धनिकों की नगरी कहलाई, छवि लख हर्षे मन माही ।।

एक वार जो देखले, इच्छा हो हर वार ।
ऐसे नगर में धनपति, रत्नाकर सुखकार ।।

नगर का श्रेष्ठी पद आये, वहीं पर सुख सम्पत्ति पाये ।।३।।

लक्ष्मी है घर में अपरम्पार, दान का भाव रखे हर वार ।
मर्यादित जीवन है गुणकार, सभी संग उत्तम है व्यवहार ।।

नगर निवासी सेठ का, कर बहुत सम्मान।
वह भी सब जन का सदा, रखता पूरा ध्यान ।।
दान देकर वह हर्षाये, वही नर सुख-सम्पत्ति पाये ।।४।।
सेठ के पतिव्रता नारी, सरस्वती षट्गुण की धारी।
बनी नित रहे वह दातारी, लक्ष्मी का लाभ लेय भारी ।।
सारे सुख है सेठ को, पर इक दुःख महान ।
रात दिवस चिन्ता यही, घर में ना सन्तान ।।
दम्पत्ति सोचे दुःख छाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।५।।

उपाय भी कई है कर लीने, दान हर वस्तु के कीने।
तंत्र कर मंत्र भी जप लीने, किये सब उन्हें बता दीने ।।
छोड़ सभी प्रपंच को, नित्य जपे नवकार।
एक रात यों स्वप्न में, मिला रत्न सुखकार ।।
चहुं दिश रश्मि बिखर जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।६।।

उजाला देख जगी नारी; पति से कही घटना सारी।
पति ने कहा-सुनो प्यारी, कर्मों की है यह बलिहारी ।।
पुत्र भाग्यशाली यहाँ, लेय जन्म घर माय।
अपनी इच्छा पूर्ण हो, कमी यही मिट जाय ।।
मंत्र की महिमा वे गाये, वही नर सुख-सम्पत्ति पाये ।।७।।

नमन कर पति को वह आये, बैठकर जिनवर को ध्याये।
व्यर्थ में समय नहीं जाये, भाव शुभ मन में वह लाये।
सदा पथ्य से वह रहे, करे गर्भ प्रति पाल।
शुभ समय शुभ लग्न वहां, जन्मा सुन्दर लाल ।।
पुत्र लख दम्पत्ति सुख छाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।८।।

महोत्सव बहुत बड़ा कीना, दान दे लाभ बहुत लीना।
नगर को सहभोज दीना, पुत्र का नाम करण कीना ।।
सपने के अनुसार ही, रत्न चूड़ दिया नाम।
पाँच धाय सेवा करे, सब भाँति आराम ।।
वर्ष वह पंचम में आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।९।।

शाला में दीना भिजवाई, पढ़े वह सदा ध्यान लाई।
उसने तो चन्द दिनों मांही, होशियारी ली है पाई ।।
मित्रों के संग में वह, निकल घूमने जाय।
राज नर्तकी देखकर, उससे वह टकराय ।।
पकड़ कर उसको दरसाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।१०।।

ज्ञानी जन सच ही फरमायें, धन का मद नर में जब छाये।
आँख से अंधा हो जाये, बुरे को देख नहीं पाये।
दिन में भी देखे नहीं, सीधा आ टकराय।
अकड़ यहाँ किस काम की, तात कमाई खाय ।।
अकड़ में तू क्यों इतराये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।११।।

नहीं नर उत्तम कहलाये, पराये धन से इतराये।
उसी को खर्चे और खाये, स्वयं जो कमा यहाँ लाये ।।
हँसी हँसी में कह गई, वह तो मन की बात।
रत्न चूड़ सुन सोचता, मारी इसने लात ।।
बात तो हित की कह जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।१२।।

सोचता अपने घर आया, तात लख उसको दरसाया।
उदासी कैसी सुत लाया, कष्ट किसने है पहुँचाया ।।
प्रिय प्राणों से तू रहा, सुत एकाकी लाल।
मुरझाया मुख क्यों बना, कह दो मुझको हाल ।।
बात सब खुलकर समझाये, वही नर सुख-सम्पत्ति पाये ।।१३।।

नमन कर सुत यह दरसाये, विदेश जाने की मन भाये।
आज्ञा यह मुझको मिल जाये, करूं व्यापार जो मन आये ।।
सुनकर बोला जनक यह, कमी नहीं घर माय।
सभी मनोरथ यहीं पर, कर लो चित जो चाय ।।
कष्ट युत विदेश बतलाये, वही नर सुख-सम्पत्ति पाये ।।१४।।

सुकोमल तेरी है काया, विदेश में सबने कष्ट पाया।
सहन नहीं होगा दरसाया, देश में सुख सबने पाया ।।
जिद ना छोड़े तू अगर, बात तीन मन लाय।
इन्द्रिय वस रखना सदा, नारी नयन हटाय ।।
सोच कर मुख से कह जाये, वही नर सुख-सम्पत्ति पाये ।।१५।।

वही नर बाहर सुख पाये, समय का ज्ञान जान जाये।
बुद्धि से काम बना लाये, कमाई नर वह कर पाये ।।
सभी भाँति समझा दिया, रहा बोलता बात।
जाऊँगा इस बार तो, हठ मेरा है तात ।।
पिता सुन आज्ञा फरमाये, वही नर सुख-सम्पत्ति पाये ।।१६।।

पिता से लक्ष दाम लीना, किराना अच्छा क्रय कीना।
जहाज़ में माल भरा दीना, मुहूर्त शुभ निकला लीना ।।
पिता पुत्र से यों कहे, रखना पूरा ध्यान।
अनीति पुर जाना नहीं, उसका करूं बयान ।।
अन्यायी नरपति कहलाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।१७।।

ठगों का नगर वह भाई, गये वो माल वहां खोई।
उम्र भर गया वह रोई, अतः दूं तुमको चेताई ।।
आज्ञा पालन सब करुं, भूलूं नहीं विचार।
निकल पड़ा घर से वह, शकुन हुए श्रेयकार ।।
उमंग में कँवर तो बढ़ जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।१८।।

परिजन उदधि तट आये, पिता वहाँ सुत को समझाये।
धर्म को भूल नहीं जाये, जाप नवकार का नित ध्याये ।।
शुभ घड़ी में जहाज तो, चला जलधि के माय।
रहे देखते वे सभी, नजर जहाँ तक आय ।।
लौट फिर सब घर को जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।१९।।

जहाजी स्तंभ पर बैठा जाय, वहीं से पथ वह तो बतलाय।
होनी को रोक न कोई पाय, जहाज दलदल में फँस गया जाय ।।
जाना चाहते थे जहाँ, नहीं वहाँ जा पाय।
है अनीति पुर सामने, पोत वहीं रुक जाय ।।
कौनसा नगर नजर आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।२०।।

पुरुष इक गया वहां आई, पूछ लिया उससे हे भाई।
बोला वह कूट द्वीप भाई, अनीतिपुर रहा है दिखलाई ।।
कंवर सोचता तात ने, कहा मिला वह आय।
भावि प्रबल संसार में, टाल न कोई पाय ।।
कही जो बात याद आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।२१।।

राजा के संग प्रजा सारी, नीचता मन में रखे भारी।
वेश्याएं बनी सभी नारी, रहें यहां चोर या जुवारी ।।
शकुन भले सन्मुख हुए, वायु पीठ का होय।
सहज भाव रख मैं चला, शंका दिल ना कोय ।।
बैठ नवकार मंत्र ध्याये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।२२।।

साहस कर माल को उतराया, दल चार ठगों का अब आया।
हड़पने सारी ही धन माया, सोच कर जाल तो फैलाया ।।

हम व्यापारी माल को, लें खरीद इस बार ।
राज्य कर भुगता सभी, दो तुम भाव उच्चार ।।
चाहो जो यहाँ से भरवाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।२३।।

अच्छा लिया स्थान आपने जोय, काम सब ठीक आपका होय ।
चिन्ता अब आप न करिये कोय, नयन कर बन्द आप तो सोय ।।
बातों में लेकर उसे, माल चारों ले जाय ।
बदले में कुछ भी नहीं, रत्न चूड़ तो पाय ।।
पसीना उसको आ जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।२४।।

अपने सब सेवक लिए बुलाय, बात सब उनको दी बतलाय ।
समझ में कुछ ना मुझको आय, पास राजा के हम तो जाय ।।
रत्न चूड़ नृप मिलन को, चला नगर की ओर ।
इक मोची जूते लिए, आया कर को जोर ।।
भाग्य जो नगरी में आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।२५।।

सेठजी सच्चे निकले आप, आपका लिया था मैंने नाप ।
मैंने तो किया आपका जाप, देख अब उतरा मेरा ताप ।।
कंचन तारों से जड़ी, जोड़ी दी पहनाय ।
दाम पूछा बोला वह, बस हजार दे जाय ।।
दंग वह सुनकर रह जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।२६।।

प्रथम ही कर दूं यदि इंकार, उचित नहीं मन में किया विचार ।
अतः दे पान उसे उस बार, तुम्हारी बात मुझे स्वीकार ।।
आगे बढ़ते ही मिला, काणा जुवारी आय ।
बोला अब तो कँवर जी, देओ आँख बक्षाय ।।
नजर तुम अब जाकर आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।२७।।

हजार में गिरवी रख दीनी, पुनः फिर खोज बहुत कीनी ।
मिले नहीं सबसे पूछ लीनी, आज तो सूरत लख लीनी ।।
हजार रुपये ले अभी, दीजे नयन बक्षाय ।
रत्न चूड पथ में खड़ा, समझ बात को जाय ।।
जाल यह मुझ पर फैलाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।२८।।

रुपया कर में ले लीना, देऊं फिर उसको कह दीना ।
चार ठग घेर उसे लीना, छेड़ वृतान्त यह दीना ।।
जलधि जल का प्रमाण क्या, दे कोई बतलाय ।
कितने गंगा रेत कण, दूजा यह दरसाय ।।
बात अब बढ़ती जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।२९।।

स्त्री दिल थाह नहीं पाये, कविजन झूठी बतलाये।
झूठी वे उपमा लगवाये, वृहस्पति पार नहीं पाये ।।

बात बात में भेद कर, बढ़ा कंवर उत्साह।
एक कहे पूछे इन्हें, हम सागर की थाह ।।

कँवर से हाँ वे भरवाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।३०।।

उदधि की थाह जो बतलाये, हमारा सब धन ले जाये।
बता यदि आप नहीं पाये, आपका धन सब हम पाये ।।

शर्त सुनी उनको कहा, सही समय पर आय।
उत्तर दूंगा सत्य मैं, ठीक तरह समझाय ।।

देखना कौन धन को पाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।३१।।

पिता की बात याद आई, फंसा मैं यहाँ जाल मांहीं।
उपाय कुछ दिखता अब नाहीं, मुक्त जो मुझे करा पाई ।।

रणघण्टा के पास जा, लेऊँ शिक्षा पाय।
सबको खुश करती यहाँ, चतुराई दिखलाय ।।

दंद संग फंद उसे आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।३२।।

सोचकर वेश्यागृह आया, कँवर लख आनंद वहाँ छाया।
स्वागत कर आसन बैठाया, कँवर का मन भी हर्षाया ।।

सहस्त्र रुपये पास थे, रख वेश्या कर माय।
वह लेकर अब सोचती, उदार यह दिखलाय ।।

धन्य मैं आप यहाँ आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।३३।।

प्रसन्न बन भृत्य को बुलवाया, उवटना देह पर करवाया।
सुगन्धित जल से नहलाया, कँवर ने अति आनंद पाया ।।

शुद्ध भोज तैयार कर, सादर वहाँ खिलाय।
पास बैठ बातें करें, सुनकर बात सुनाय ।।

भाव अब मन का बतलाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।३४।।

यहाँ का हाल सभी जानूं, ठगों की नगरी में मानूं।
कभी मैं अपनी ना तानूं, सभी को मैं तो पहचानूं ।।

वेश्या बोली भव्यजन, पुण्य योग जब आय।
ठग विद्या से लूटकर, षष्ट भाग बँटवाय ।।

राजा व मंत्री भी पाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।३५।।

पुरोहित, नगर सेठ, कोतवाल, सभी इससे हैं माला माल ।
पाती मैं हिस्सा तो हर साल, ठगों की उल्टी होती चाल ।।
कपट कला सबको यही, देती है सिखलाय ।
स्नेह भाव दिखला उसे, अपना लिया बनाय ।।
जाल से मुझको निकलाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।३६।।

कँवर को वेश्या सब समझाय, कहूँ वह काम आप करवाय ।
जाल से निकल सहज ही जाय, नारी का वेश आप धर आय ।।
शुद्ध वसन को पहनकर, हो जाये तैयार ।
कहा उस तरह चल पड़ा, बन कर वह तो नार ।।
उदधि के तट पर आ जाये, वही नर सुख सम्पत्ति ।।३७।।

आई यह कौन तुम्हारे साथ, बिगड़ ना जाये कोई बात ।
सुता श्री दत्त सेठ की साथ, इसलिए थामा इसका हाथ ।।
इससे ना घबराइये, यह मम प्राणाधार ।
वह व्यक्ति सब समझ वहाँ, चला गया उस बार ।।
उन सेठों को हम तो भिजवाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।३८।।

सेठ चल चारों ही आये, चरण छू उसके हर्षाये ।
आपके द्वार सेठ आये, भाव जो जाने बतलाये ।।
वह बड़ा होशियार है, बुद्धि हाथ ना आय ।
अपने माल के तोल में, मच्छर हड्डी चाय ।।
सुन के वे चारों घबराये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।३९ ।।

बाप तो अपना अब आया, मेरा मन सुनकर घबराया ।
कहूँ कब तुमको यह आया, मेरा मन ठहर नहीं पाया ।।
निकल आप जाये अगर, आना मेरे पास ।
छूटो उससे तुम सभी, लेना फिर ही सांस ।।
अक्ल मेरी काम नहीं आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।४०।।

दिखने में लगता वह भोला, मन को हमने ना टटोला ।
भेद नहीं उसने भी खोला, सेठ इक सबसे ही बोला ।।
देश देश में जो भ्रमे, वह बने होशियार ।
बना शहर मशहूर यह, धूर्तों का सरदार ।।
चतुर नर हो वो ही आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।४१।।

तुम्हें जो लाभ है मिल जाये, उसी का हिस्सा हम पायें।
किन्तु मन मोदक जो खाये, पेट नहीं उससे भर पाये ।।
समझ बात सारी चले, अपने अपने स्थान।
मोची आ यह बोलता, मिली मुझे धन खान ।।
विदेश से सेठ यहाँ आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।४२।।

जूती की जोड़ी दी पहनाय, मूल्य जो मांगा देते जाय।
अब तो लूंगा मन में चाय, सारा धन मांगू मन में आय ।।
प्रथम भाग्य को देखले, मांगे से ना पाय।
खुशी करन हित यों करे, राज कँवर जन्माय ।।
कहो क्या खुशिया ना पाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।४३।।

दे के क्या उत्तर बतलाये, नहीं कहे राज दण्ड पाये।
खुशी है कीमत भर पाये, कहो क्या हाथ तेरे आये ।।
यह बुद्धि यहाँ आपकी, उसे कहाँ से पाय।
इतनी बात कह कर वह, उठकर दौड़ लगाय ।।
चला वहाँ काणा आ जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।४४।।

नमन कर बातें दरसाई, आंख को गिरवी रखवाई।
छुड़ाने की मन में आई, रुपया थमाया कर मांही ।।
सुनकर वेश्या यों कहे, भारी गलती खाय।
सेठ कहे मैं वणिक हूँ, सही आँख दूं लाय ।।
अतः वह दूजी निकलाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।४५।।

तोल अरु माप मांही आये, बराबर आंख यदि पाये।
तुम्हारी आँख सही आये, वही वो लाकर संभलाये ।।
दाम पूर्व ही दे दिये, अब तेरे बस नाय।
बात बताकर सेठ तो, देगा तुझे हराय ।।
अंधेरा उसके नयन छाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।४६।।

सांस ले लम्बी वह जाये, चारों फिर धूर्त वही आये।
हँस के सब अपनी बतलाये, तुम्हारी अक्ल भांग खाये ।।
कहूँ जलधि का थाह मैं, रोको नदियां जाय।
क्या ताकत है आप में, दो मुझको बतलाय ।।
अज्ञता वश धन सब जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।४७।।

वात सुन वे तो घबराये, समझ में कुछ भी ना आये ।
चाल चल उसमें फँस जाये, चिन्ता में अपने घर जाये ।।

वेश्या की हर वात को, गुरु वाक्य सम धार ।
हित शिक्षा हिय धार कर, छाई खुशी अपार ।।

वस्त्र घर आकर पलटाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।४८।।

बात रणघण्टा बतलाये, पति हम तुमको अब पाये ।
भूप यदि आज्ञा फरमाये, आपके नगर चली जाये ।।

आश्वासन दे कँवर जी, मन में अब हर्षाय ।
ज्ञानवान नारी मिले, उचित राह मिल जाय ।।

ज्ञान ही काम सदा आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।४९।।

व्यापारी चारों अब आये, जहाज में क्या हम भरवायें ।
हड्डियाँ मच्छर की लाये, जहाज को उससे भरवायें ।।

सुनकर चारों ही चकित, बोले ना हो पाय ।
चार लाख चारों मुझे, त्वरित अभी दिलवाय ।।

दे के धन कर मलते जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।५०।।

जलधि की थाह वाले आये, प्रश्न का उत्तर वतलाये ।
दे जो तुम उत्तर ना पाये, आपका धन हम ले जाये ।।

वात श्रवण कर के कहा, रोको नदिया जाय ।
थाह तुम्हें वतलाऊँगा, सुन चारों घवराय ।।

दे के धन पिण्ड वे छुड़वाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।५१।।

पुण्य से ठग भी हार खाये, नगर में यश उसका छाये ।
भूप से मिलने को जाये, भूपति आसन दिलवाये ।।

राजा सुन अचरज करे, पुण्यवान दिखलाय ।
हम प्रसन्न तुम पर हुए, मांगो वह मिल जाय ।।

कँवर कहे रणघण्टा पाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।५२।।

प्रसन्न हो राजा ने दीनी, कँवर ने अपना है लीनी ।
मोची ने अपनी वात कीनी, जोड़ कर राह वहां चीन्ही ।।

काणे ने अब वात की, आँख अभी दिलवाय ।
थी कैसी दो दूसरी, लेकर के हम आय ।।

पकड़े पग वह तो भग जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।५३।।

भूप से आज्ञा अब लीनी, देश अब जाऊँ कह दीनी।
जँची जो वस्तु क्रय कीनी, जहाज में भरवा वे लीनी।।
ले रण घण्टा नार को, बैठ पोत के माय।
कर आनन्द से यात्रा, अपने नगर में आय।।
सूचना जनक वहाँ पाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये।।५४।।

सूचक को द्रव्य बहुत दीना, दे के सम्मान विदा कीना।
साथ में परिजन को लीना, सार्थक हुआ मेरा जीना।।
कुशल क्षेम से आ गये, कर के सागर पार।
भाग्य प्रबल है पुत्र के, कहे सभी नर नार।।
सेठ के संग सब ही जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये।।५५।।

पिता को शीश झुका दीना, सभी को नमन वहां कीना।
खुशी से नगर मांही लीना, तात का फूल गया सीना।।
मात शरण में सिर नवा, रत्न चूड़ हर्षाय।
देख पुत्र व पुत्र वधु, आशिष वचन सुनाय।।
खुशी में नयन नीर आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये।।५६।।

अनीति पुर जाकर के आये, हाल सुन सब अचरज लाये।
वहां जा हार सभी जाये, पुण्य से कोई जय पाये।।
सभी प्रशंसा कर रहे, पिता मौन हो जाय।
नीति वचन सुत सामने, पिता ना ही सराय।।
लौट घर खुश हो सब जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये।।५७।।

नगर की गणिका भी आई, आदर दे उसको बैठाई।
कँवर कहे बातें चुभ जाई, धन के संग नार यह पाई।।
वस्त्राभूषण कीमती, गणिका को दिलवाय।
वह कहे नृप आज्ञा पा, मैं लूँ पति बनाय।।
आप ही भर्ता सम भाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये।।५८।।

आज्ञा ले अपने घर आई, बात जा नृप को बतलाई।
नृप ने भी आज्ञा दिलवाई, कँवर संग शादी रचवाई।।
दो नारी से मोद में, कँवर महल के माय।
धर्म पुण्य के साथ में, अपना समय बिताय।।
तात की ऊमर ढल जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये।।५९।।

पिता अब सोचे मन मांही, अवस्था मेरी अब आई।
सम्पत्ति बहुत मैंने पाई, धर्म की करूं मैं कमाई।।
बुला पुत्र को एक दिन, दी बातें समझाय।
धर्म ध्यान में दम्पत्ति, अपना समय बिताय।।
अन्त में सद्गति वे पाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये।।६०।।

एक दिन भूप पास जाये, भेंट दे कँवर तो हर्षाये।
राजा दे आसन बैठाये, विदेश की बातें बतलाये।।
अनीतिपुर में ठगों ने, जाल दिया फैलाय।
कैसे छूटा मैं वहाँ, सब दीना बतलाय।।
भूपति विस्मय मन लाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये।।६१।।

जीत वहां तुमने जो पाई, धन्य है तुमको तो भाई।
पुण्य से विगड़ी बन जाई, भाग्य बन जाता सहाई।।
राज सभा में कँवर का, हुआ बहुत सम्मान।
हुई प्रशंसा बुद्धि की, आया अपने स्थान।।
सभी जन उसके गुण गाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये।।६२।।

साथ जो सुकृत ले आया, पाये वह सब मन का चाया।
दान दे याचक मन भाया, खाली ना लौट कोई पाया।।
घर के जैसा हाट पर, दान पुण्य करवाय।
जिसको जैसी चाह हो, मांग मांग ले जाय।।
याचक सब धनपति हो जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये।।६३।।

समय पर पुत्र रत्न पाया, शाला में उसको भिजवाया।
धर्म का ज्ञान भी करवाया, पुण्य का पथ क्या बतलाया।।
कई वर्ष संसार में, रहकर करे विचार।
छोड़ सभी जग जाल को, बन जाऊं अणगार।।
महामुनि धर्म घोष आये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये।।६४।।

करने को दर्शन वह जाये, वन्दना करके हर्षाये।
भावना अपनी बतलाये, मुझे अब दीक्षा दिलवायें।।
हाथ जोड़ कर रत्न अब, चाहे संयम राह।
संयम मय जीवन बने, केवल मेरी चाह।।
भावना मेरी फल जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये।।६५।।

वन्दना कर वह घर आया, सभी को घर में बतलाया।
भाव मन दीक्षा का लाया, धर्म की लेलूं मैं छाया ।।
आप अकेले जा रहे, हमको पीछे छोड़।
साथ आपके हम चलें, जाल यहाँ के तोड़ ।।
नगर जन सुनकर हर्षाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।६६।।

दीक्षा की घड़ियाँ शुभ आई, नगर में नव खुशियाँ छाई।
नृप ने आ दी है बधाई, धन्य हो सचमुच तुम भाई।
तीन करण व त्रियोग से, संयम जग में पाल।
स्वर्ग सिधारे अन्त में, सुख है जहाँ विशाल ।।
करनी के फल मानव पाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।६७।।

स्वर्ग सुख भोगे मन चाहे, वहाँ से चव भू पर आये।
क्षेत्र महा विदेह यहाँ पाये, साधना करी मोक्ष जाये ।।
रत्न चूड़ वृतान्त यह, सुना वैसा बनाय।
कम ज्यादा कुछ भी नहीं, आत्मा साक्षी लाय ।।
भव्य जन ध्यान यह लाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।६८।।

करो नित धर्म ध्यान भाई, जिन्दगी मानव की पाई।
सुकृत ही जग में सुखदायी, लो न्याय व नीति अपनाई ।।
प्राज्ञ कृपा 'सोहन' सदा, कहे यह बारम्वार।
जीवन आप संवार लें, होगी जय जय कार ।।
सरस जग जीवन हो जाये, वही नर सुख सम्पत्ति पाये ।।६९।।

श्रावक संघ विनती हित आया, वर्धनपुर बस का चौराया।
चौमासी माँग साथ लाया, स्वीकृति पाकर हर्षाया ।।
दो हजार तैयालीस, होली चातुर्मास।
टांटोटी के संघ में, बढा वहुत उल्लास ।।
धर्म की वद्धि मन भाये, वहीं नर सुख सम्पत्ति पाये ।।७०।।



३ | कृतज्ञता

(तर्ज : नेम जी की.............)

कृतघ्न तुम बनना मत भाई।
कृतज्ञ ही जग में यश पाई।।
सूत्र ठाणायंग के मांही, तीन से उऋण हो नाहीं।
अथाह है ऋण तीनों का ही, ध्यान से सुने समझ जाही ।।१।।

मात-पिता के कर्ज से, सुत न मुक्त हो पाय।
निज चमड़ी की पगरखी, चाहे वह पहनाय ।।
उच्च गति सुख दे पहुँचाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।२।।

गुरु से चेला बतलावे, कर्ज से मुक्त नहीं थावे।
उम्र भर सेवा कर पावे, वचन श्रद्धा से अपनावे ।।
अन्त समय में गुरु को, पण्डित मरणा आय।
ऐसा रखे ध्यान यहां, अपना फर्ज निभाय ।।
रहे जिन आज्ञा के मांहीं, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।३।।

सेठ का मुनीम हो वैसे, कर्ज से मुक्त न हो ऐसे।
कर्म करे न्याय व नीति से, हाट की पैठ बढे जैसे ।।
कभी मुनीम का सेठ से, अहित अगर हो जाय।
कृतज्ञता का भाव रख, अवगुण ना दरसाय ।।
कथा मन मेरे है भाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।४।।

धर्मपुर शहर बड़ा भारी, धर्म दत्त सेठ है गुणधारी।
कोटिपति घर सुन्दर नारी, योग सब उसके सुखकारी ।।
लाखों का व्यापार नित, अच्छी होती आय।
भाग्य के कारण लक्ष्मी, दिनदिन बढ़ती जाय ।।
लाभ नित लेवे माल मांही, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।५।।

ज्ञान चंद मन में यह लाया, मिले कोई स्थान मन का चाया ।
वर्धनपुर उसे नहीं भाया, चला वह धर्मपुरी आया ।।
करूं नौकरी सेठ की, चल जाये मम काम ।
नीति से जीवन मेरा, पायेगा आराम ।।
धर्मपुर देख वह हर्षाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।६।।

धर्मदत्त लखकर फरमावे, आने का कारण बतलावे ।
ज्ञान चन्द सुनकर दरसावे, पेट ही खेंच उसे लावे ।।
सेठ कहे तस हाट पर, काम करो मन चाय ।
लेखन कैसा है जरा, दो मुझको बतलाय ।।
सेठ लख लेखन हर्षाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।७।।

सेठ ने उत्तम पद दीना, ज्ञान ने नेक काम कीना ।
माल ले बेच लाभ लीना, काम लख सेठ हृदय भीना ।।
सारा ही व्यापार अब, दिया ज्ञान के हाथ ।
ज्ञान सजग बन सब करे, बिगड़ न जाये बात ।।
कीर्ति चहुँ ओर छाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।८।।

सेठ भी पूछ करे सब काम, आज्ञा में सेवक चले तमाम ।
सुबह से हो जाये चाहे शाम, नम्र बन करे सभी वह काम ।।
सेठ विचारे भाग्य से, मिला मुनीम सुखदाय ।
मेहनत से निशदिन यह, मेरी शान बढ़ाय ।।
ईमान से करता काम जाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।९।।

एक दिन सेठ घूमने जाय, उसने रथ लीना है मंगवाय ।
मुनीम को अपने संग ले जाय, बातें कर आगे बढते जाय ।।
पथ में इक मालिन मिली, रथ लीना रुकवाय ।
लेकर ककड़ी हाथ में, सेठ उसे दरसाय ।।
मूल्य कहो क्या लोगी मांई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।१०।।

टका एक कीमत दरसाये, सेठ एक पैसा बतलाये ।
मालिन सुन मन में यह लाये, सेठ यह कैसे कहलाये ।।
कहे बड़े हो आदमी, मोल रहे करवाय ।
ऐसे ही ले लीजिए, बड़े प्रेम से खाय ।।
मुनीम लख सोचे मन माहीं, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।११।।

आज से भाग्य उलट आया, पुण्य सब चुका नजर आया ।
मोल ककड़ी का करवाया, भाव क्यों मन में यह छाया ।।

इस छोटी सी चीज का, क्यों करवाया भाव ।
हो निराश मालिन गई, देख सेठ बर्ताव ।।

दीनी नहीं उसे एक पाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।१२।।

बुद्धि भी विवश हो जाये, समय जब बुरा यहाँ आये ।
भावना वैसी बन जाये, समझ सब मन की खो जाये ।।

अब मुझको रहना नहीं, जाना है निज देश ।
किया निवेदन सेठ से, दे मुझको आदेश ।।

हिसाब ले चला देश मायी, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।१३।।

मुनीम के साथ भाग्य जाये, हाट में हानि अब आये ।
सेठ कुछ समझ नहीं पाये, कोटिपति निर्धन हो जाये ।।

लक्ष्मी का स्वभाव यहाँ, ठहरे ना इक ठौर ।
कही चंचला वह गई, जावे इत उत पौर ।।

भोर भी संध्या बन जाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।१४।।

मुनीम घर रमा चली आये, कोटि पति वह भी बन जाये ।
कार्य अब बढ़ता ही जाये, लाभ वह सब में ही पाये ।।

ज्यों ज्यों लक्ष्मी बढ़ रही, त्यों त्यों धर्म बढ़ाय ।
दान पुण्य निशदिन करे, जग में वह यश पाय ।।

खर्च करे धन सुकृत मांही, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।१५।।

मान नहीं मन माही आ जाय, बीते दिन भूल नहीं वह पाय ।
नम्रता हर पल वह दिखलाय, सादगी जीवन में अपनाय ।।

अपने साधन से सदा, वह तो लाभ उठाय ।
शुद्ध भावना धार कर, सेवा लाभ कमाय ।।

दीन जन हो गये सुखदाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।१६।।

धर्मदत्त भाग्य पलट जाये, विणज में घाटा नित पाये ।
सम्बन्धी देखे मुस्काये, भृत्य सब छोड़ चले जाय ।।

खाने को अब पास में, रहा न दाना एक ।
परिजन मुँह को फेरते, आया उसको देख ।।

सेठ अब रोवे मन मांही, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।१७।।

समय पर मदद जिन्हें दीनी, उन्होंने हँसी देख कीनी ।
भाग्य ने खुशियाँ सब छीनी, जगत की रचना देख लीनी ।।
तीन वर्ष यूं ही गये, पाया कष्ट अपार ।
सेठानी से यह कहा, चले छोड़ घर बार ।।
अपना कोई रहा यहाँ नाहीं, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।१८।।

देख लिया सभी जगह जाई, अपनापन मिला मुझे नाही ।
गया धन लौट रहा नाहीं, द्रव्य बिन कौन पूछे आई ।।
दूध जहाँ शक्कर मिले, छाछ वहां पर लोण ।
यही कहावत सत्य है, जग में किसका कौन ।।
सेठानी नयन नीर लाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।१९।।

पाँव जिस ओर भी ले जाये, वहीं चल पेट भरे खाये ।
भाग्य का पता भी लग जाये, यहाँ क्यों बैठे दुःख पाये ।।
सेठानी सुनकर कहे, निर्णय कर ही जाय ।
भटक भटक पग तोड़ना, उलटी शान गंवाय ।।
सेठ के बात समझ आई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।२०।।

वह बोला मुनीम नगर जाये, कोटिपति अब वह कहलाये ।
महिमा जग उसकी नित गाये, परख उसकी भी कर आये ।।
घर में था उसको लिया, धर दोनों ने माथ ।
नम आँखें उनकी हुई, निकले अब वे साथ ।।
ठहरे इक धर्म शाला आई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।२१।।

बिछाकर टाट सेठ सोया, मन ही मन सेठ वहाँ रोया ।
पा के क्यों मैंने सब खोया, पाप क्या मैंने था बोया ।।
आज भूमि पर सो रहा, टाट वस्त्र बिछवाय ।
पाप उदय है आ गया, सोच रहा अकुलाय ।।
भाग्य के आगे बस नाहीं, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।२२।।

खुशी पा फूले हम नाहीं, जाये ना दुःख में कुमलाई ।
आये कभी धूप कभी छाँई, भाग्य से बने बिगड़ जाई ।।
यही सोचते सेठ को, गहन नींद आ जाय ।
प्रातःकाल उठकर वहाँ, प्रभु के गुण को गाय ।।
दम्पति आगे बढ़ जाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।२३।।

वर्धनपुर नगर पास आये, बाग को लखकर हर्षाये ।
सेठ पत्नी को समझाये, यही पर आप बैठ जाये ॥
पहले जाकर मैं वहाँ, देखूं सब व्यवहार ।
कैसी उसकी भावना, कैसा दे सत्कार ॥
बाद में लूंगा बुलवाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ॥२४॥

सेठ सब समझाकर जाये, राह में भाव कई आये ।
मुनीम पहचान के मुस्काये, तभी हम उसकी हाट जाये ॥
मालुम कर बाजार में, पहुंच वहाँ पर जाय ।
हाट सामने हो खड़ा, देखे नयन लगाय ॥
मुनीम बन सेठ वहां आई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ॥२५॥

अनेकों सेवक आआ कर, काम सब करते दिल धर कर ।
ज्ञान मसनद से पीठ धर कर, देख रहा काम सभी हँस कर ॥
सेठ विचारे अब तलक, नजर पड़ी है नाय ।
बार बार उठ बैठता, कभी दृष्टि पड़ जाय ॥
ज्ञान की नजरें टकराई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ॥२६॥

अहो ! सेठ ये मेरे उपकारी, आज तो कृपा करी भारी ।
भेजकर नौकर उस बारी, बुला लिये उसने तत्कारी ॥
फटे पुराने वस्त्र है, दीन हीन यह हाल ।
हुई दशा कैसे यह, प्रकट करें तत्काल ॥
जान नहीं सके भविष्य भाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ॥२७॥

चुकाऊं बदला मैं इस बार, आपका मेरे पर उपकार ।
करूं मैं उत्तम सार संभार, आप हैं मेरे प्राणाधार ॥
ज्ञान सेठ के चरण नम, पूछा सारा हाल ।
नयन सेठ के भर उठे, उत्तर देत सवाल ॥
ज्ञान की आँखें भर आई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ॥२८॥

ज्ञान कहे तन अपना मानो, सम्पत्ति सब अपनी जानो ।
भेद मत मन मांही आनो, सेठ तुम चाकर मम मानो ॥
धूप-छांव का खेल जग, फरक नहीं मन लाय ।
भूल न पाऊं आपको, चाहे जग पलटाय ॥
चिन्ता अब देवे छिटकाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ॥२९॥

ज्ञान तो मान रहा अहसान, स्नेह की समझो यह पहचान।
कृतज्ञ जन रखते ऐसा ध्यान, बाहरी नहीं करते सम्मान ।।
इस जग में उपकार को, माने वह इंसान।
भूल जाय अहसान तो, मनुज वह हैवान ।।
पावे दु:ख दुर्गति में जाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।३०।।

अपना यश खूब ही बतलाई, भेद नहीं समझे मन मांही।
पुत्र की शपथ भी दिलवाई, सेठ को दीना समझाई ।।
स्नानादिक करवा वहाँ, नये वस्त्र पहनाय।
षट्रस भोजन साथ कर, चला हाट पर आय ।।
हाट पर आये हर्षाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।३१।।

सभी से परिचय करवाया, उन्हें उपकारी बतलाया।
ज्ञान सब इनसे ही पाया, रही इनकी मुझ पर छाया ।।
मालिक समझो हाट के, करें आप सम्मान।
सेवक को समझा पुनः, पूछ रहा यह ज्ञान ।।
क्या माता जी संग नहीं आई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।३२।।

बाग में तरुवर की छाया, बिठाकर सेठानी आया।
ज्ञान यह सुनकर हर्षाया, अभी लूं उनको बुलवाया ।।
सोचे मन में ज्ञान अब, भेजूं मैं निज नार।
लेकर वह आये उन्हें, करके अति सत्कार ।।
अभी जा कहूँ नार ताई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।३३।।

उधर सेठानी क्यों मन लाय, सेठ जी गये शहर के माय।
गरीबी में क्यों आदर पाय, कौन जो पास उन्हें बैठाय ।।
धनपति थे जब सेठ जी, आते लोग अनेक।
धन जाते सारे गये, लीना जग को देख ।।
अपनापन गया है बिरलाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।३४।।

बाग में शिशु नजर आया, सजी आभूषण से काया।
देख मन उसका ललचाया, छीन लूं उसके मन आया ।।
पुष्प चुन रहा भृत्य तो, देखे कोई नाय।
क्षण में शिशु को मार कर, गहने लिये लुकाय ।।
टोकरे में शव रखा लाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।३५।।

मनुज की मति जो फिर जाये, लोभ में जीव उलझ जाये।
बुराई मन में छा जाये, ज्ञान सब मन का बिसराये॥
थी बगिया वह ज्ञान की, नहीं उसे था ज्ञान।
लोभी मन क्यों सोचता, वह तो था बे भान॥
पाप तो छिपे कभी नाहीं, कृतज्ञ ही जग में यश पाई॥३६॥

भृत्य भी पुष्प चुन के आया, शिशु को नहीं उसने पाया।
भगे वह मन में घबराया, अंधेरा आँखों में छाया।
महिला देखी दूर पर, भृत्य वहां अब आय।
शिशु तुमने देखा बहिन, दो मुझको बतलाय॥
सेठानी बोली ना भाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई॥३७॥

भृत्य यह सुनकर घबराया, माली को बुला तुरंत लाया।
सेठ शिशु मैं लेकर आया, यहीं पर मैंने बैठाया॥
घुटनों के बल वह चले, नहीं समझ में आय।
गया कहाँ ढूंढ़ो उसे, मन मेरा घबराय॥
शंका इस नारी पर आई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई॥३८॥

दोनों ही अब चक्कर खाये, लौट कर पुनः वहीं आये।
नारी पर दोनों चिल्लाये, शंका तुझ पर ही है आये॥
दोनों ने जब खोज की, मिला सभी सामान।
शव को लख दी गालियाँ, तू दुष्टा शैतान॥
मारते शरम नहीं आई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई॥३९॥

भृत्य के नयन लगे झरने, लगा विलाप वह करने।
माली भी देख लगा डरने, बैठ गया वह शव के शरने॥
भृत्य चला रोता हुआ, आश्रय दाता पास।
हुआ हाल शिशु का कहा, पड़ी वहीं पर लाश॥
नारी कहीं वह ना भग जाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई॥४०॥

ज्ञान मन ही मन दुःख पाया, नैन से आंसू नहीं लाया।
सेठ भी सुनकर घबराया, सभी ने धीरज बंधवाया॥
मांजी ने की है यहाँ, मेरे सुत की घात।
जीवित हो सकता नहीं, मन में सोचे बात॥
होनी को टाल सके नाहीं, कृतज्ञ ही जग में यश पाई॥४१॥

कर्मों से नियत बदल जाये, बुराई मन में छा जाये।
गरीबी क्या नहीं करवाये, सत्य भी झूठा बन जाये।।
होनी थी वह हो गई, कहो कही ना जाय।
रख दो शव को भूमि में, वन में तुम ले जाय।।
मन को भी दीना समझाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई।।४२।।

स्वयं के मन को समझाया, कर्म का दोष ही बतलाया।
नीर नयनों से ढल आया, बोल कुछ फूट नहीं पाया।।
सारी बातें सोचकर, आया नारी पास।
अपने पुण्योदय जगे, सेठ पधारे खास।।
नार यह सुन कर हर्षाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई।।४३।।

नार कहे उत्तम उपकारी, करो सत्कार यहाँ भारी।
जान ले दुनियाँ भी सारी, चुकाओ कर्जा दिल धारी।।
पति बोला अवगुण करे, क्या करना उस बार।
सहन करें अवगुण भी, माने यदि उपकार।।
सुअवसर खोवे हम नाहीं, कृतज्ञ ही जग में यश पाई।।४४।।

माता भी बगियन में आई, शिशु को देख के ललचाई।
गहने लख लोभ गया छाई, शिशु को मार बैठ जाई।।
निज शिशु का मरना सुना, चक्कर उसको आय।
दिया सहारा ज्ञान ने, बार बार समझाय।।
मौत यहाँ सबको ही आई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई।।४५।।

बात सुन समझ वह जाये, धैर्य निज मन में वह लाये।
भृत्य से रथ को मंगवाये, लेने माता को खुद जाये।।
पति आज्ञा पाकर चली, लेकर रथ को नार।
हाथ थाम रथ में चढ़ा, किया बहुत सत्कार।।
मानो कुछ हुआ वहाँ नाहीं, कृतज्ञ ही जग में यश पाई।।४६।।

वस्त्र सब तन के बदलाये, स्वर्ण के भूषण पहनाये।
भोजन भी सादर करवाये, मन ही मन माता शरमाये।।
मेरे कर से हो गया, इनका महा अकाज।
सुना सेठ के हृदय में, आई गहरी लाज।।
घटना यह हृदय चीर जाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई।।४७।।

सेठ अब ज्ञान पास आया, पकड़कर पाँव को दरसाया।
कृतज्ञ नहीं तुम जैसा पाया, सजा मुझको दो मनचाया ।।
वात सेठ की श्रवण कर, कहे ज्ञान उस बार।
होनी टल सकती नहीं, करें ना अब विचार ।।
बुरे मम माता जी नाहीं, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।४८।।

आप सब बात भूल जायें, बात को मन से विसरायें।
पुत्र सम मुझको अपनायें, कभी नहीं मन में अब लायें ।।
यह साधारण वात है, किया महा उपकार।
कर्ज मुक्त कैसे बनूं, मन में उठे विचार ।।
भूलूं नहीं जीवन भर ताई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।४९।।

जोड़ कर हाथ मेरा कहना, आपको सदा यहाँ रहना।
सेवा को समझूं मैं गहना, आपसे मैंने था पहना ।।
देखी दम्पति भावना, सेठ बोल ना पाय।
सेठानी सुनकर वहाँ, पाँवों में गिर जाय ।।
धन्य जो बुद्धि यह आई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।५०।।

विचरते सद्‌गुरु वहां आये, करने को दर्शन सब जाये।
ज्ञान के मन में यह आये, भाव संयम का अपनाये ।।
निज नारी को कह दिये, मन के सारे भाव।
सफल जिन्दगी मैं करुं, बना धर्म की छाँव ।।
धर्म का पथ है सुखदाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।५१।।

सेठ भी पीछे क्यों रह पाय, सेठानी चली संग अब जाय।
लिया वहाँ संयम को अपनाय, हर्ष चारों में ही छा जाय ।।
बोले गुरु से एक दिन, क्यों आये कुविचार।
हत्या की क्यों बाल की, जीवन दिया बिगार ।।
मति क्यों इनकी पलटाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।५२।।

पूर्व से वैर चला आया, उसी का बदला यह पाया।
भाव भी मन का पलटाया, पाप के पथ को अपनाया ।।
पूर्व जन्म का वैर था, समझ गया सब ज्ञान।
बिना धर्म जाने नहीं, मानव निज पहचान ।।
संयम के पथ को अपनाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।५३।।

गुरु से ज्ञान सभी पायें, धर्म की महिमा नित गायें।
त्याग व तप को अपनायें, मुक्ति इससे है मिल जाये ।।
कथा श्रवण कर सज्जनों, धारो मन के माय।
उपकारी उपकार को, कैसे देय चुकाय ।।
तभी भव सफल बने भाई, कृतज्ञ ही जग में यश पाई ।।५४।।

प्राज्ञ गुरु मेरे उपकारी, कृपा की 'सोहन' पर भारी।
बनाया जीवन सुखकारी, बने वे जग तारन हारी ।।
इकतालीस दो हजार, होली चातुर्मास।
रची नगर गुलाबपुरा, काव्य कथा उल्लास ।।
महिमा नित गुरुवर की गाई, कृतज्ञ हो जग में यश पाई ।।५५।।



४ | सच्चे श्रोता

(तर्ज : नेम जी की..............)

श्रोता वह गुणी तभी भाई ।
जिन्दगी जिसने है महकाई ।।

पंडित की कला बढ़े वाही, खोल दे ज्ञान पट्ट लाई ।
हृदय भी जाये हर्षाई, ज्ञान को दे जो प्रकटाई ।।

यदि अज्ञों की हो सभा, पंडित जन दुःख पाय ।
विष वाणी में घोलकर, अर्थ देय पलटाय ।।
श्रोता हो ऐसे दुःखदाई, जिन्दगी जिसने महकाई ।
वसन्तपुर नगरी के माही, वसन्त नृप राज करे वाही ।
दीनों का होवे सहाई, प्रजाजन थके ना गुण गाई ।।

रानी कमला नित्य ही, पाले पति की आन ।
कर से करती दान वह, रखे प्रजा का ध्यान ।।
खाली नहीं जाये कोई आई, जिन्दगी जिसने महकाई ।
पुत्र बलवन्त सिंह नामी, अध्ययन कर ज्ञान लिया पामी ।
विज्ञ बन बना है गुण धामी, तात आज्ञा का अनुगामी ।।

उसी नगर में आ गया, बहुत बड़ा विद्वान ।
चौराहे पर बैठकर, उत्तम दे व्याख्यान ।।
श्रोता गण खूब रहे आई, जिन्दगी जिसने महकाई ।
कीर्ति अब जन जन में छाई, बात नृप कानों तक जाई ।
वृद्ध नृप सोचे मन माही, कथा मैं सुनूं हृदय लाई ।।

मंत्रीगण को भेजकर, पंडित को बुलवाय ।
सुन मंत्री की बात को, पंडित भी हर्षाय ।।

महल को देख खुशी छाई, जिन्दगी जिसने महकाई।

भूप की सभा में वह आया, मान अति नृप से है पाया।
उच्चासन देकर बैठाया, प्रभु का वहां भजन गाया॥

बैठ किले के चौक में, कथा वह सुनाय।
अन्तःपुर के साथ में, सब ही लाभ उठाय॥
प्रजा में खुशियाँ है छाई, जिन्दगी जिसने महकाई।

जनता में गहरा रस आये, जनता सुन मगन बनी जाये।
बात पंडित वह बतलाये, लोगों के मन में जम जाये॥

एक मास तक सुन सभी, बहुत भेंट ले आय।
पाकर पंडित खुश हुआ, मन में ऐसे लाय॥
कथा से क्या शिक्षा पाई, जिन्दगी जिसने महकाई।

सोचकर भूप पास आया, नमन कर उसने बतलाया।
श्रवण कर क्या कुछ नहीं पाया, सफल भव मेरा हो पाया॥

पंडित जी मैं क्या कहूँ, मेरे दिल की बात।
कथा हृदय को छू गई, धन्य आपका साथ॥
खोता नहीं कभी एक पाई, जिन्दगी जिसने महकाई।

कुटुम्ब में भूमि बाँट दीनी, कथा सुन मन माही चीनी।
पहले नहीं शिक्षा यह लीनी, भूल यह भारी है कीनी॥

सूच्याग्रे जितनी यहाँ, देता धरती नाय।
अब बाजी ना हाथ में, क्या होवे पछताय॥
रानी से पूछू अब जाई, जिन्दगी जिसने महकाई।

पंडित जी कथा पहले सुनती, द्रोपदी सम मैं भी बनती।
पति मैं पाँच यहाँ करती, बात का समय गया बीती॥

राजकंवर के सामने, पूछे पंडित आय।
कँवर कहे पंडित सुनो, उम्र यहाँ पक जाय॥
साठ की उम्र होने आई, जिन्दगी जिसने महकाई।

पिता को कैद यहां करता, उसी में सड़ सड़ कर मरता।
सदा मैं अपनी ही करता, कंस बनकर के मैं फिरता।

लेकिन अब तो हाथ से, निकल गई है बात।
वृद्धावस्था तात की, मृत्यु ओर ये जात ।।

कथा तो मुझे बहुत भाई, जिन्दगी जिसने महकाई।
सबकी सुन पंडित मुर्झाया, अज्ञों के बीच चला आया।
सुधा को विष में बदलाया, अर्थ इनने क्या लगाया ।।

प्राज्ञ कृपा 'सोहन' कहे, ऐसे श्रोता आय।
व्याख्याता भी क्या करे, कथा सुना पछताय ।।

हृदय में ज्ञान उतर जाई, जिन्दगी जिसने महकाई ।।



५ | सन्त की सीख

[तर्ज—नेम जी की······]

सन्त की बात जगत माही ।
सदा ही होवे सुखदाई ।।

श्रवण कर जिसने भी धारी, मिटी हैं विपदायें सारी ।
जन्म अरु मरण दिया टारी, मुक्ति गढ़ पाये नर नारी ।।

सुनकर के जो भी पुरुष, न धारे हृदय माय ।
जग में दुःख पाये वह, ज्ञानी जन फरमाय ।।
कथा यह समझो सब भाई, सदा ही होवे सुखदाई ।
शहर एक शान्तिपुर नामी, बसे वहाँ श्रावक गुण धामी ।
सदा जिन वाणी के कामी, चले जिन आज्ञा अनुगामी ।।

उन मांही इक सेठ है, शान्ति चन्द्र शुभ नाम ।
धर्म युक्त जीवन चले, पाप रहित सब काम ।।
अनीति नहीं हृदय मांही, सदा ही होवे सुखदाई ।।
लिये व्रत शुद्ध भाव पाले, अधर्म में हाथ नहीं डाले ।
त्रस की वह हिंसा को टाले, मर्यादा स्थावर की पाले ।।

पोषध कर षट्मास में, न डाले अन्तराय ।
पाले चौदह नियम को, तीन मनोरथ लाय ।।
ज्ञान लिया जीवा जीव पाई, सदा ही होवे सुखदाई ।
मुनीम जो उसकी हाट पर आय, शर्त यह उससे यों ठहराय ।
हाट से आप नहीं घर जांय, नहीं हम जब तक यहाँ आ जांय ।।

शर्त सेठ ने बाँध दी, निवृत हो वह आय।
सेठ हाट जब आय तो, मुनीम चला घर जाय।।
वह आते ही देवे फरमाई, सदा ही होवे सुखदाई।
कितने ही मुनीम वहाँ आते, शर्त से तंग वे हो जाते।
सीख ले वापिस घर जाते, ठहर वहां कोई नहीं पाते।।

चाह नौकरी की लिए, एक मुनीम आ जाय।
शर्त मानकर रह गया, हर्षित मन के माय।।
निर्जला ग्यारस है आई, सदा ही होवे सुखदाई।
मुनीम के उस दिन था उपवास, नौकरी देनी हाट पर खास।
दूसरे दिन होते ही उजास, लगी उसे तेज भूख व प्यास।।

प्रातःकाल हीं हाट पर, चला मुनीम वह आय।
सोचे सेठ आ जाय तो, जल्दी वह घर जाय।।
भूख से रहा मैं घबराई, सदा ही होवे सुखदाई।
समय पर सेठ हाट आया, मुनीम ने आते ही बतलाया।
सेठ सुन ऐसे फरमाया, जाने की जल्दी क्यों लाया।।

हलवाई की हाट से, माल पुवे कुछ लाय।
सुन दांत पीसे मुनीम ने, मन मसोस कर जाय।।
सोंप दिये मालपुवें लाई, सदा ही होवे सुखदाई।
कलाकन्द भी उससे मंगवाया, जामुन की फिर से दरसाया।
वह जा जा कर के सब लाया, सेंव विन नहीं जाता खाया।।

आते जाते मुनीम का, पारा अब तो तेज।
करूं मनाई सेठ को, हुआ यहाँ लबरेज।।
भूख से चला नहीं जाई, सदा ही होवे सुखदाई।
सेंव वह झुंझला कर लाया, सेठ उसे देख के हर्षाया।
दही वड़ा कहकर बनवाया, भूल से मैं नहीं कह पाया।।

सुन मुनीम ने चावियां, धरी सेठ के पास।
मुझे न करनी नौकरी, लगी भूख अरु प्यास।।
तभी यों सेठ ने दरसाई, सदा ही होवे सुखदाई।
भोजन मैं करके ही आया, तुम्हारे खातिर मंगवाया।
प्रेम से खाओ फरमाया, वात सुन मुनीम हर्षाया।।

चलने की ताकत नहीं, घर भी है अति दूर।
अतः यहीं भोजन करूं साधन सब भरपूर।।
सज गई अब तो मिठाई, सदा ही होवे सुखदाई।
मुनीम अब बैठ वहाँ खाये, सेठ के गुण भी अब गाये।
स्वयं पर गुस्सा भी आये, सेठ को समझ नहीं पाये।।

दही बड़ा लाया नहीं, करे याद हर वार।
दोष नहीं है सेठ का, थी मेरी इन्कार।।
मुनीम अब रहा है पछताई, सदा ही होवे सुखदाई।
दृष्टान्त से समझो सब भाई, सेठ सम सन्त मुनिराई।
मुनीम सम श्रावक बतलाई, करें तप त्याग हृदय लाई।।

त्याग त्याग को श्रवण कर, ध्यान नहीं दे पाय।
बार बार सुनकर यहाँ, गर्म गर्म हो जाय।।
रुष्ट बन बोले वे नाहीं, सदा ही होवे सुखदाई।
प्राज्ञ कृपा 'सोहन मुनि' गाये, धरा धन साथ नहीं जाये।
समय पर जागे सुख पाये, जिन्दगी सफल बन जाये।।

सामायिक स्वाध्याय में, देवे चित्त लगाय।
अशुभ कर्म सब नष्ट हो, सद्गति मानव पाय।।

धर्म से बढ़ती पुण्याई, सदा ही होवे सुखदाई।।



६ | पाप का फल

[तर्ज—नेम जी की·······]

पाप कर मन में हरसाये।
भोगते फल को पछताये॥

अन्याय कर तू तो सुख पाये, तृष्णा वश कर्म बंधे जाये।
ध्यान में तनिक नहीं लाये, बन्द रख आँख निकल जाये॥

वह उदय में आयेगा, ना होगा छुटकार।
चाहे जितना ही करो, लेगा डंडे मार॥
कर्ज किया लेने हित आये, भोगते फल को पछताये।

रामपुर शहर एक नामी, वहाँ का राम सिंह स्वामी।
दयालु दानी गुण धामी, प्रजा के खातिर हितकामी॥

सोचे वह तो सब सुखी, रहें नित्य नर नार।
पीड़ित कोई ना रहे, बढ़े परस्पर प्यार॥
किसी को दुःख ना हो पाये, भोगते फल को पछताये।

वसावट सुन्दर नगर मांही, राजपथ चौड़े बनवाई।
वापिकाएं वहां खुदवाई, बाग भी गये हैं लगवाई॥

कर भी थोड़ा वस्तु पे, चाहे कोई लाय।
व्यौपारी व्यापार कर, चाहे जब ले जाय॥
नीति से अच्छी आय आये, भोगते फल को पछताये।

बसे अहीर जाति आई, पशु धन जिनके घर माही।
दूध दही वेचे हरसाई, लोग आ आ कर ले जाही॥

दूध दही विक्रय करे, पानी नहीं मिलाय।
गुजर चलाये प्रेम से, करते अच्छी आय॥
निकलता समय वहां जाये, भोगते फल को पछताये।
अहीरन एक हृदय में लाय, दूध में पानी लेऊं मिलाय।
सभी को छोड़ अकेली जाय, राह से चली कूप पर आय॥

वही दूध में जल मिला, बढा वह ले जाय।
कम भावों में बेच दे, उसी नगर के माय॥
ले के नर-नारी घर जाये, भोगते फल को पछताये।
उधार महिने की कर जाये, मास एक बीता दाम पाये।
दाम पा मन में हरसाये, चरी में रखकर ले जाये॥

पानी ले जिस कूप से, पय के माहि मिलाय।
उसी कूप पर आयके, सोचे खाना खाय॥
अलग रख चरी रोटी खाये, भोगते फल को पछताये।
तरु पर बन्दर एक आया, चरी लख नीचे वह आया।
चरी को उठा डाल धाया, अहीरी का जी दुःख पाया॥

एक मास की रकम सब, रखी उसी के माय।
वापिस पाने के लिए, रोटी अब दिखलाय॥
कपि दांतों को दिखलाये, भोगते फल को पछताये।
चरी में नजरें दौड़ाई, खाने की वस्तु नहीं पाई।
कपि ने सोचा मन मांही, डाल दूं चरी कूप मांही॥

रोती रोती अहिरनी, झोली दी फैलाय।
एक रुपया ले बन्दर, उसके पास गिराय॥
रुपया पुनः हाथ आये, भोगते फल को पछताये।
उसे झट कूप मांही डारे, अहिरन हाय हाय उच्चारे।
कवि एक आया उस वारे, देख वह मन मांही धारे॥

आज तमाशा देख लूं, मर्कट का इस वार।
इक झोली इक कूप में, रहा देखलो डार॥
खाली कर चरी को गिराये, भोगते फल को पछताये।
कवि का मन यह वतलाये, पाप कर जरा न शरमाये।
फल से बचना जीव चाहे, किन्तु वह प्रकट हो ही जाये॥

छुपो चाहे नभ में जा, या कि दिशा के अन्त ।
चाहे सागर में छुपो, कहे सत्य यह सन्त ।।

पकड़ले जहाँ भी वह जाये, भोगते फल को पछताये ।

कविजन कहते जग में साफ, जगत में पुण्य हो चाहे पाप ।
कभी नहीं होवे किसी को माफ, मिटे नहीं कभी पाप की छाप ।।

प्राज्ञ कृपा 'सोहन' सदा, कहते बारम्बार ।
पाप कर्म से नित बचो, चाहो सुख हर बार ।।

किया वह प्रकट तो हो जाये, भोगते फल को पछताये ।।



७ नवकार की शक्ति

[तर्ज—नेम जी की·······]

जपो सब सदा मंत्र नवकार।
इसी से पाओगे भव पार॥

भटकते क्यों तुम घर घर द्वार, पास में सब मंत्रों का सार।
श्रद्धा बिन जीवन है बेकार, मंत्र को लेवे मन में धार॥
कर एकाग्रत चित को, रख मन में विश्वास।
सभी कामना हो सफल, हो मन में उल्लास॥
शंका नहीं रक्खे हृदय मंझार, इसी से पाओगे भव पार॥१॥

कथा कहूँ सुनलो देकर ध्यान, राजगृह नगर बड़ा लासान।
भूपति श्रेणिक गुण की खान, प्रजा का रखता अच्छा ध्यान॥
एक समय आदेश दे, करे भवन तैयार।
कारीगर बुलवा लिए, अच्छे सोच विचार॥
काम सब करे आज्ञा अनुसार, इसी से पाओगे भव पार॥२॥

भवन जब आधा बन जाये, अचानक वह तो गिर जाये।
ढेर मलवे का बन जाये, कोई भी समझ नहीं पाये॥
देख व्यवस्था भूप के, मन में उठा विचार।
किस कारण से यह गिरे, सोचे वारम्वार॥
नैमित्तिक बुलवाया उस वार, इसी से पावोगे भव पार॥३॥

ज्योतिषी सारा गणित लगाय, भूपति को दीना वतलाय।
बलि इस भूमि पर दी जाय, वत्तीस गुण वाले नर को लाय॥
तभी भवन तैयार हो, वरना होवे नाश।
सुनकर नरपति ने कहा, ढूंढ़ो-लाओ पास॥
भृत्यगण ढूंढ़ें नगर मंझार, इसी से पाओगे भव पार॥४॥

साथ ही नरपति यह कहलाय, बराबर कंचन से तुलवाय।
घोषणा करो नगर के मांय, काम अपना जिससे हो जाय ।।
उसी नगर में विप्र है, निर्धन एक अनाथ।
कष्ट पा रहा जन्म से, अशुभ कर्म है साथ ।।
समय पर मिले नहीं आहार, इसी से पाओगे भव पार ।।५।।

घर में इक नारी बच्चे चार, करे बस इधर उधर बेगार।
रहे कभी वे तो निराहार, जिन्दगी उनको लगती भार ।।
नित्य सुबह से शाम तक, श्रम करता भरपूर।
किन्तु गरीबी विप्र की, तनिक न होवे दूर ।।
परिश्रम कर नित जावे हार, इसी से पाओगे भव पार ।।६।।

पुत्र लघु अमर एक गुणवान, एक दिन पहुँच गया उद्यान।
वहां पर मुनिवर कर रहे ध्यान, सोचे कुछ पाऊँ इनसे ज्ञान ।।
वन्दना करके अमर तो, खड़ा रहा कर जोड़।
कही गरीबी की कथा, मन की लज्जा छोड़ ।।
मुनि ने सुनी बात उस बार, इसी से पाओगे भव पार ।।७।।

जपो तुम श्रद्धा से नवकार, यही सब देगा कष्ट निवार।
बैठ कर सीख लिया नवकार, हृदय में श्रद्धा बढ़ी अपार ।।
नमन किया घर आ गया, मन में हर्ष अपार।
उसी वक्त उद्घोषणा, हुई नगर मंझार ।।
विप्र सुन कीना हृदय विचार, इसी से आओगे भव पार ।।८।।

उम्र भर दुःख ही दुःख पाया, अन्न भी सुख से नहीं खाया।
सुअवसर पास आज आया, बेच दूं पुत्र भाव लाया ।।
घर आकर निज नार को, कही हृदय की बात।
सुनकर नारी ने कहा, मारो धन के लात ।।
पुत्र मम जीवन के आधार, इसी से पाओगे भव पार ।।९।।

स्वर्ण हम उसके बराबर पांय, जिन्दगी बीत खुशी से जाय।
वक्त नहीं ऐसा फिर से आय, डाटकर दिया उसे समझाय ।।
दीन दशा लख नार ने, अपना शीश हिलाय।
उद्घोषक के सामने, विप्र अमर ले जाय ।।
विप्र का माना है आभार, इसी से पाओगे भव पार ।।१०।।

स्वर्ण पर दम्पत्ति हर्षाये, अमर सुन मन में घबराये।
आप क्यों मुझको मरवायें, बुरा क्यों भाव हृदय लायें।।
बड़े बुजुर्गों से अमर, बोला आप बचाय।
मात-पिता के नयन पर, स्वर्ण गया है छाय।।
आप ही करें आज उपकार, इसी से पाओगे भव पार।।११।।

कोई भी बोल नहीं पाये, सन्तरी संग अमर जाये।
बात नृप को वह बतलाये, सजा क्यों हम ऐसी पाये।।
दे कंचन तव तात को, लीना तुमको मोल।
दोष हमारा क्या यहां, तू ही मुख से बोल।।
बात सुन हुआ वह लाचार, इसी से पाओगे भव पार।।१२।।

अमर को वेदी पर बैठाय, स्नान करा शुद्ध वसन पहनाय।
मंत्र अब पण्डित रहे सुनाय, लोग सब देख रहे हैं आय।।
लपटें उठती यज्ञ की, अमर जपे नवकार।
रक्षा देव मेरी करो, जान लिया संसार।।
ध्यान धर करे वह जय जयकार, इसी से पाओगे भव पार।।१३।।

अमर को पण्डित उठाये, ज्वालाएं बढ़ती ही जाये।
हवन में उसको डलवाये, उठाकर देव तो ले जाये।।
कर से वह तो छूटकर, गया गगन के माय।
सुमन वृष्टि की देव ने, पण्डित गण चकराय।।
गूंज रहा अब भी वहाँ नवकार, इसी से पाओगे भव पार।।१४।।

पण्डित गण औंधे गिर जाये, हवन की ज्वाला बुझ जाये।
भूपति दौड़ा वहां आये, देखता वह भी रह जाये।।
मंत्र चूक कैसे हुई, जल्दी बोलें आप।
हवन अग्नि कैसे बुझी, आप रहे क्यों कांप।।
भूपति नयन बने अंगार, इसी से पाओगे भव पार।।१५।।

अमर को सिंहासन बैठाय, देवगण उस पर चँवर ढुलाय।
मंत्र की शरण में कोई जाय, बाल कोई बांका नहीं कर पाय।।
पंडित सब बेहोश हैं, सुध उनको ना आय।
नृप अपने कर जोड़कर, बोला कृपा कराय।।
भजूं मैं मंत्र महा नवकार, इसी से पाओगे भव पार।।१६।।

होश नृप तुझको अब आया, मंत्र की मांग रहा छाया।
पण्डितों ने है बहकाया, करुणा को तूने छिटकाया ।।
चरणामृत लो अमर का, दो इन पर छिटकाय।
पण्डित गण तैयार हों, तुम यह करो उपाय ।।
चरण धो छिड़क किया तैयार, इसी से पाओगे भव पार ।।१७।।
अमर से भूपति यह दरसाय, तुम्हें मैं राज्य देऊ संभलाय।
वात सुन अमर भाव बतलाय, शरण ली महामंत्र की पाय ।।
जग यहां स्वार्थ से भरा, जान लिया है आज।
मेरा मन में गूंजता, महा मंत्र का साज ।।
भजो मन निश दिन अब नवकार, इसी से पाओगे भव पार ।।१८।।

भाव मन दीक्षा का लाया, आज्ञा भूपति से वह पाया।
मुनि के चरण शरण आया, सर्मपित चरणों में काया ।।
शरण गुरु मैं आ गया, लेकर दीक्षा भाव।
भव सागर से पार अब, करिये मेरी नाव ।।
आप से पाया जीवन सार, इसी से पाओगे भव पार ।।१९।।
अमर ने दीक्षा ले लीनी, त्याग से काया रंग लीनी।
ज्ञान की सौरभ है भीनी, त्याग की चादर है झीनी ।।
दीक्षा लेकर चल दिया, पाले मन वच काय।
गुरु सेवा करके वह, जीवन सफल बनाय ।।
संयम अब लगे उसे सुखकार, इसी से पाओगे भव पार ।।२०।।

बात यह तात-मात जानी, मुनि बन कीनी नादानी।
मूर्ख ने कैसी मन ठानी, आया धन जाये मन जानी ।।
किसी तरह भी धन रहे, वो हम करें उपाय।
एक बात है सामने, मुनि को दें मरवाय ।।
मात के बात जमी उस बार, इसी से पाओगे भव पार ।।२१।।
छुरा ले चली निशा के माय, मुनिवर बैठे ध्यान लगाय।
पेट में दीना वहां चलाय, वे बारहवें स्वर्ग गये सिधाय ।।
मात पुत्र को मारकर, आई पथ के माय।
सिंह सामने आ गया, मार उसे खा जाय ।।
गई वह छठ्ठी नरक मंझार, इसी से पाओगे भव पार ।।२२।।
स्वर्ण वह कितना दुःखदायी, मारते सुत ना घबराई।
तृष्णा तज भजना जिन राई, मोक्ष का पथ ही सुखदाई ।।
प्राज्ञ कृपा 'सोहन' सदा, जपता है नवकार।
सामायिक स्वाध्याय से, उत्तम बने विचार ।।
चाहो यदि जीवन का उद्धार, इसी से पाओगे भव पार ।।२३।।

८ | होलिका

(तर्ज : नेम जी की...............)

पाप से डरना सब भाई।
होलिका रही यह बतलाई ।।

बसन्तपुर जितशत्रु राया, प्रजागण को है सुखदाया।
रहे वहाँ विप्र श्याम काया, पुत्र की जोड़ पांच पाया ।।
पुत्री नहीं मां बाप के, शान्ति नहीं दिल माय।
रात दिवस यह कामना, पुत्री लूं मैं पाय ।।
सफल यह कामना हो आई, होलिका रही यह बतलाई ।।१।।

खुशी उस घर में अति छाई, ज्योति नव घर अपने आई।
होलिका नाम सुता पाई, विप्र को देते हैं बधाई ।।
बड़ी हो गई है सुता, घूमे नित स्वच्छन्द।
मन आये वो ही करे, बनी बुद्धि से अन्ध ।।
पिता तक बात चली आई, होलिका रही यह बतलाई ।।२।।

बात सुन विप्र शरम लाये, नयन में अंधियारा छाये।
पत्नी को जाकर समझाये, विवाह कर हम छुट्टी पाये ।।
उज्जैनी में पहुँचकर, अपनी बात चलाय।
युवक गोविन्द देखकर, पुत्री दी परणाय ।।
होलिका पति घर पहुँचाई, होलिका रही यह बतलाई ।।३।।

यार सब चले आये पीछे, होलिका का दामन खींचे।
स्नेह रस अब भी वह सींचे, गोविन्द की गर्दन हुई नीचे ।।
कुछ भी वह बोला नहीं, घर आकर समझाय।
अच्छे गुण धारण करो, घर में आदर पाय ।।
यार रहे गुप्त सभी आई, होलिका रही यह बतलाई ।।४।।

होलिका भक्ति नित करती, नग्न बन्न घर मांही फिरती।
रात्रि में घर बाहर फिरती, पति से तनिक नहीं डरती ।।
शनैः शनैः यह बात भी, बढी शहर के मांय।
गोविन्द ने सुनकर यह, लीना शीश झुकाय ।।
नारी को आकर समझाई, होलिका रही यह बतलाई ।।५।।

कड़क कर वह सन्मुख आई, बोली क्या है इसके मांही।
रहो चुप डर मुझको नाहीं, पति को डाटें नित वाही ।।
नहीं समझ उसको लगी, दी पीहर पहुँचाय।
अब तो मस्ती छा गई, मिलन यार से जाय ।।
पिता ने घर से निकलाई, होलिका रही यह बतलाई ।।६।।

माता भी उसके साथ जाये, विप्र भी रोक नहीं पाये।
नगर बाहर दोनों आये, झोपड़ी अपनी बनवाये ।।
होलिका से मिलने को, आते यार अनेक।
भद्रजनों ने राज में, की शिकायतें देख ।।
राजा से आज्ञा यह पाई, होलिका रही यह बतलाई ।।७।।

आग झोपड़ी के लगवाओ, माता को पहले डलवाओ।
वाद में होलिका जलवाओ, यारों को संग में फिकवाओ ।।
धूं धूं कर जलने लगी, मात होलिका संग।
यार जल गये साथ में, देखे जन हो दंग ।।
वे व्यन्तरी व्यन्तर वन जाई, होलिका रही यह वतलाई ।।८।।

नृपति के गुण सारे गाये, भद्र जन राहत अव पाये।
राख दुष्टों की वन जाये, मर के दुःख वे तो पहुँचाये ।।
व्यन्तर वनकर के सभी, करते अव उत्पात।
सभी रात होते करें, जिन्दे ऊपर घात ।।
वात यह वढी शहर मांही, होलिका रही यह वतलाई ।।९।।

एक दिन सूरीश्वर आये, लोग मुनि दर्शन को जाये।
निवेदन करके वतलाये, सभी मन व्यन्तर भय छाये ।।
आचार्य श्री वोले यह, हमको भय है नाय।
आयेंगे यदि सामने, देंगे हम समझाय ।।
भीड़ कुछ बोल नहीं पाई, होलिका रही यह वतलाई ।।१०।।

व्यन्तरी निशा होते आई, संग में व्यन्तर सब लाई।
मुनि को छू वे नहीं पाई, वे पास आ बैठे घबराई॥
मुनिवर का उपदेश सुन, जागा सब में ज्ञान।
नीच कर्म हमने किये, होकर के नादान॥
मुक्ति का पथ दो बतलाई, होलिका रही यह बतलाई॥११॥

सवेरे सभी आप आओ, क्षमा तुम मन में अपनाओ।
क्षमा का लाभ सभी पाओ, मुक्ति इस जीवन से चाहो॥
भोर हुई सब आ गये, दर्शन करने लोग।
मुनि दर्शन करके कहा, मिला हमें शुभ योग॥
खुशी मन हम सबके छाई, होलिका रही यह बतलाई॥१२॥

वे लोग हर्षित होकर आये, छू के मुनि चरण बैठ जाये।
देख वे व्यन्तर नहीं पाये, एक स्वर तभी गूंज जाये॥
क्षमा मुझे कर दीजिए, मैं थी नारी नीच।
आग लगा फिर डालिए, चाहे मुझ पर कीच॥
क्षमा कर धन्य बनो भाई, होलिका रही यह बतलाई॥१३॥

होलिका पाप हलका कीना, भोले जन तुमने नहीं चिन्हा।
पाप कर दुर्गति मग लीना, भोगते दुःख होगा भीना॥
अतः खेल यह होलिका, तज दो सभी सुजाण।
संवर सामायिक करो, जिससे हो कल्याण॥
बात यह लेओ अपनाई, होलिका रही यह बतलाई॥१४॥

कर्म तो सहज ही बंध जाये, भोगते जीव कष्ट पाये।
पाप के पथ में नहीं जाये, क्षमा की महिमा को गाये॥
प्राज्ञ कृपा 'सोहन मुनि' कहे सदा हितकार।
भव्य आत्मा चेतो तुम, ले लो नर भव सार॥
चेत मन मानव तन पाई, होलिका रही यह बतलाई॥१५॥



९ | पारस रत्न

[तर्ज—नेम जी की·······]

समय अनमोल रत्न भाई।
खोने पर फिर ना मिल पाई ॥

आलसी जो नर बन जाये, दरिद्रता उसके घर आये।
बनते सब काम बिगड़ जाये, हाथ मल मल कर पछताये ॥
ज्ञानी जन सारे कहें, इसे कष्ट की खान।
सुअवसर जो खोता है, वह मूरख नादान ॥
सुनो सब ध्यान लगा भाई, खोने पर फिर ना मिल पाई ॥१॥

शहर इक सुर सुन्दर शुभ स्थान, स्वामी गुण सुन्दर वहाँ महान।
प्रजा का हर पल रखता ध्यान, दीनों का करता नित उत्थान ॥
नगर निवासी प्रेम से, करते अपने काम।
अपने अपने भाग्य से, पाते सब धन धाम ॥
पूर्वकृत मिले यहाँ आई, खोने पर फिर ना मिल पाई ॥२॥

रहे इक निर्धन वहाँ ऐसा, पास में नहीं उसके पैसा।
काम वह करे चाहे कैसा, फिर भी वह जैसे का जैसा ॥
वह तो श्रम करता रहे, रात दिवस भरपूर।
किन्तु अधिक मिलता नहीं, भूख न होवे दूर ॥
दरिद्रता घर में रही छाई, खोने पर फिर ना मिल पाई ॥३॥

एक दिन सोचे मन मांही, मुझे सुख मिलने का नाहीं।
अतः जा जंगल के मांही, प्राण को त्यागूं मैं वांही ॥
डाल गले में फांस को, मैं तज दूंगा प्राण।
फिर सारे ही कष्टों से, पालूंगा मैं त्राण ॥
सोच यह रस्सी उठाई, खोने पर फिर ना मिल पाई ॥४॥

भाव धर चला यह मन में, चल के अब पहुँच गया वन में।
कष्ट बहु पाया इस तन में, डाल दी है रस्सी डालन में ॥
वट की डाली पर चढ़ा, बांधे रस्सी छोर।
एक देव वन में खड़े, देख रहे उस ओर ॥
क्यों भावना मरने की आई, खोने पर फिर ना मिल पाई ॥५॥

देव नर तन में अब आया, थाम कर हाथ को दरसाया।
भाव क्यों मरने का लाया, पुण्य से मिलती यह काया ॥
देव कहे इस मरण से, नहीं होगा छुटकार।
दुःख तो जीवन साथ है, कुछ तो करो विचार ॥
युक्ति यह किसने बतलाई, खोने पर फिर ना मिल पाई ॥६॥

गरीबी से मैं घबराऊं, छूट मैं इससे नहीं पाऊँ।
अतः अब मरना मैं चाहूँ, और क्या तुमको बतलाऊँ ॥
देव कहे मम बात को, सुनलो देकर ध्यान।
चीज ऐसी देऊँ तुम्हें, बढ़े तुम्हारी शान ॥
पास नहीं आलस फटकाई, खोने पर फिर ना मिल पाई ॥७॥

कहे यदि चीज वो मिल जाये, शान जो मेरी बढ़ जाये।
भाव मरने का नहीं आये, सुखी यह जीवन बन जाये ॥
सात दिनों के लिए ही, देता हूँ यह रत्न।
लाभ उठाना है तुम्हें, करके पूरा यत्न ॥
विधि भी पूरी समझाई, खोने पर फिर ना मिल पाई ॥८॥

लोहे के रत्न जो छू जाये, छूते ही कंचन बन जाये।
मिले वह लोहा घर लाये, हुआ कर स्वर्ण में बदलाये ॥
सात दिवस हैं पास में, लेना स्वर्ण बनाय।
सात दिवस के बाद में, रत्न स्वयं खो जाय ॥
बात यह लेना ध्यान मांही, खोने पर फिर ना मिल पाई ॥९॥

पारसमणि लेकर हर्षाया, खुशी से घर पर वह आया।
लोहा ला ला कर रखवाया, रत्न को गुप्त ही रखवाया ॥
लोहे में ही ध्यान अब, अपना वह लगाय।
बीत गये जब सात दिन, मूरख बन पछताय ॥
पारस सम नर देही पाई, खोने पर फिर ना मिल पाई ॥

मूर्ख नर समझ नहीं पाये, माया में खुद को उलझाये।
प्रभु को भज वो नहीं पाये, माया में खुद को उलझाये ।।

पावन मानव भव मिला, निकल नहीं यह जाय।
लाभ उठाले समय का, लौट नहीं यह आय ।।

समय तो पल पल रहा जाई, खोने पर फिर ना मिल पाई ।।११।।

ज्ञानी नर लाभ सदा लेता, सामायिक संवर चित्त देता।
श्रद्धा रख नैया को खेता, आत्म का बनता विजेता ।।

प्राज्ञ कृपा 'सोहन' यहां, सबको यह समझाय।
धर्म ध्यान में चित्त को, सज्जन लेय लगाय ।।

आत्म को लो अब जगाई, खोने पर फिर ना मिल पाई ।।१२।।



१० | दर्प का अन्त

[तर्ज—नेम जी की…….]

करो मत दर्प कोई भाई।
दर्प से ज्ञान छिटक जाई।।

सूत्र में ध्यान अगर जाये, आठ मद उसमें हम पाये।
इनमें से कोई भी लाये, लाके मन में ना गर्वाये।।
मद जिसका मानव करे, निकल कई भव जाय।
मद का जो बंधन तजे, वही धन बुद्धि पाय।।
बात यह ज्ञानी फरमाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई।।१।।

जम्बू के भरत क्षेत्र मांही, राज्य नृप चोल करे वांही।
कमी उस क्षेत्र में कुछ नाहीं, रहे विद्वान वहां भाई।।
निपुण हैं सब विद्या में, शास्त्रों का है ज्ञान।
जीत सके उसको नहीं, कोई भी विद्वान।।
जीत का मद है मन मांही, दर्प से ज्ञान छिटक जाई।।२।।

राज्य के पण्डित गण आये, महिमा उसकी ही सब गावे।
उच्च पद मण्डित करवाये, फूला वह अब ना समावे।।
राज सभा में आ कहे, श्रेष्ठ आप नर पाल।
पद पाकर मैं भी हुआ, हे नर श्रेष्ठ निहाल।।
आप दें आज्ञा सुनाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई।।३।।

आप सम मैं भी कर पाऊं, पण्डितों के घर घर जाऊँ।
पा के कर घर बैठा खाऊँ, आज्ञा यदि आपसे मैं पाऊँ।।
बातें सुनकर विप्र की, नृप आज्ञा फरमाय।
पंडितगण विद्वान को, अपना कर दे जाय।।
पण्डित कई देते घर आई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई।।४।।

एक दिन इक पण्डित जावे, लौटकर पुनः नहीं आवे।
विप्र निज दूत को पठावे, सत्ता मद में वह कह जावे ॥
कर देने में आपने, क्यों की इतनी देर।
अब चलने वाला नहीं, देखो तुम अंधेर ॥
दूत कहे कर देओ लाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ॥५॥

देखले राजाज्ञा है पास, विप्र का मैं हूँ सेवक खास।
आप ना तोड़े मन विश्वास, लेने हित आये इस आवास ॥
उस पण्डित के शिष्य गण, भड़क उठे तत्काल।
गुरु ना देंगे कर तुझे, मत फैलाओ जाल ॥
झूठ नहीं पाँव चलने पाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ॥६॥

दूत चल विप्र पास आया, विप्र को आकर भड़काया।
बात सुन विप्र तो चिल्लाया, मूर्ख वह समझ नहीं पाया ॥
कहा दूत से जा पुनः, कहना मेरी बात।
न्याय काव्य साहित्य में, तव कितनी औकात ॥
दूत आ कही छात्र ताईं, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ॥७॥

बात सुन शिष्य कहे उस बार, गुरुजी गये नदी के पार।
करो शास्त्रार्थ मैं हूँ तैयार, जानता मैं शास्त्रों का सार ॥
बात छात्र की सब सुनी, कही दूत ने आय।
पण्डित ने मद में कहा, अपयश वह तो पाय ॥
हार वह मुझ से तो जाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ॥८॥

तभी गुरु बाहर से आये, बात सुन मन में घबराये।
शिष्य यदि हार मेरा पाये, हँसी मेरी ही हो जाये ॥
शिष्य उन्हें आश्वस्त कर, बोला डरें न आप।
गुरु कृपा से बन्द हो, उसका वह आलाप ॥
आज्ञा दें मुझको हर्षाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ॥९॥

शिष्य अब नगरी में आया, राजा को सब कुछ बतलाया।
नृप ने दरबार है बुलाया, दे के आसन है बैठाया ॥
शिष्य और विद्वान में, होगी किसकी हार।
रानी नृप से पूछती, झुक झुक बारम्बार ॥
जगता विद्वान जीत जाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ॥१०॥

मुझे तो शंका है महाराज, आज पण्डित की जाये लाज ।
शिष्य यह करे गुरु का काज, गिरेगी पण्डित ऊपर गाज ।।
जय पायेगा शिष्य ही, इसी सभा के मांय ।
मैं शिष्या इसकी बनू, यश डंका बजवाय ।।
बात हुई आपस के मांही, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ।।११।।

कहे विद्वान वहां इतराय, पूछो क्या शंका मन के मांय ।
तीन ही प्रश्न मेरे मन आय, आप दें उत्तर यहाँ बतलाय ।।
शास्त्र प्रमाणे दीजिए, उत्तर आप सुजान ।
उचित सभासद को लगे, तो मैं भी लूं मान ।।
शान्ति उस सभा में है छाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ।।१२।।

हमारे धर्मी हैं नर राई, पतिव्रता रानी भी सुखदायी ।
तुम्हारी माता बंध्या नांही, उलट दो अर्थ यहाँ बतलाई ।।
प्रश्न तीन सुनकर वहाँ, शास्त्री विस्मय लाय ।
उत्तर क्या दूं मैं यहाँ, नहीं समझ में आय ।।
बैठा वह मुँह को लटकाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ।।१३।।

अधर्मी नृप को बतलाऊँ, क्या दोष रानी पर लगाऊँ ।
बन्ध्या मम माता दरसाऊँ, हँसी मैं अपनी करवाऊँ ।।
प्रश्न उचित तीनों नहीं, समझ न आई बात ।
गुरु की भांति धूर्त है, क्षमा करें हे नाथ ।।
शास्त्र से काट सकूं नाहीं, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ।।१४।।

शिष्य अब खड़ा वहाँ हो जाय, शास्त्र से काटूं अब बतलाय ।
श्लोक में कहे मनु महाराय, समझ में आप सभी को आय ।।
छठम अंश कर का सदा, नृप जनता से लेय ।
पापी जन भी राज को, अपना कर तो देय ।।
उसी का अंश खाये राई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ।।१५।।

धर्मी नृप कैसे फिर कहलाय, पाप की करते हैं जब आय ।
अधर्मी नृप अपने हो जांय, झूठ यह नहीं कोई कह पाय ।।
शास्त्रों के अनुसार ही, रजस्वला हो नार ।
प्रथम भोगते सोमजी, मनु कहते उच्चार ।।
पतिव्रता रानी जी नाहीं, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ।।१६।।

मनु स्मृति के ही अनुसार, पुत्र ही करता है उद्धार।
तुम्हारा घृणित हुआ आचार, पाप का कर लेते हर बार ।।
पण्डित गण के पास से, पैसे ले ले खाय।
इस कारण माता पिता, नरक लोक में जाय ।।
अतः माँ बन्ध्या कहलाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ।।१७।।

बात सुन जन मन हर्षाये, विप्र अब सिर को झुकाये।
शिष्य वहां यश को अब पाये, सभासद धन्य धन्य गाये ।।
पा के पराजय शास्त्री, लज्जित हुआ अपार।
बोल वहाँ पाया नहीं, लोग कहें धिक्कार ।।
दलन सब दर्प का हो जाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ।।१८।

ज्ञान का दर्प जो भी करता, वह नर औंधे मुह गिरता।
सेर को सवा सेर मिलता, हार कर आहें वह भरता ।।
अतः गर्व का त्याग कर, सरल बनो नर नार।
घमण्डी का सिर झुके, कहें सभी हर बार ।।
सीख यह समझो सब भाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ।।१९।।

सभा को विप्र ने अब त्यागा, होके वह लज्जित फिर भागा।
राजा भी निंदिया से जागा, स्नेह का जोड़ लिया धागा ।।
धन्य धन्य हैं वे गुरु, धन्य है वंधु ज्ञान।
राज्य धन्य तुमसे हुआ, तुम हो शिष्य सुजान ।।
गुरु की महिमा बढ़ जाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ।।२०।।

नृप के संग रानी उठ जाये, शीश वहां उठकर झुकाये।
गुरु हम तुमको बनायें, शिष्य कहे आश्रम में आयें ।।
प्राज्ञ कृपा 'सोहन मुनि' सदा रहे चेताय।
अहम भाव रखना नहीं, ओले सम गल जाय ।।
गर्व का नाश तो हो जाई, दर्प से ज्ञान छिटक जाई ।।२१।।



११ | सच्ची श्रद्धा

(तर्ज—नेम जी की ....)

श्रद्धा से सिद्धि सब पाये ।
श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।

साधना शून्य ही कहलाये, श्रद्धा का अंक जो लग जाये ।
श्रद्धा संग साधना जो भाये, गुणा कई साधना बढ़ जाये ।।
जप तप कितना भी करें, श्रद्धा बिन है शून्य ।
अगर साधना संग करें, जीवन बनता धन्य ।।
धन्य जो श्रद्धा अपनाये, श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।१।।

शहर इक सुन्दर पुर नामी, सूरसिंह उसका है स्वामी ।
कोष में धन की नहीं खामी, प्रजा के हित का वह कामी ।।
उसी शहर के पास में, इक छोटा सा ग्राम ।
अहीर जाति रहती वहां, दूध दही का काम ।।
शहर में बेचने को जाये, श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।२।।

राह में नदी एक आये, धारा कल कल वहती जाये ।
कभी वह ज्यादा आ जाये, लोग पुलिया से पार पाये ।।
सावन भादव में सदा, नदी वहे भरपूर ।
हो पुलिया से अहिरनी, आती थककर चूर ।।
विलम्ब इस कारण हो जाये, श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।३।।

दूध नित मन्दिर में लाये, भोग ठाकुर का लगवाये ।
एक दिन देरी से आये, पुजारी को वह वतलाये ।।
आज देर ज्यादा हुई, यह अहिरी वतलाय ।
वेग नदी का वढ़ गया, चढ़ पुलिया से आय ।।
वात सुन पण्डित समझाये, श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।४।

शक्ति है प्रभु नाम मांही, उदधि को तिर जाये माई।
नदी को छोटी बतलाई, बात सुन वह तो हर्षाई ।।

अब मैं ऐसा ही करुं, करलूं नदिया पार।
नदी पास आ नाम ले, वहाँ हो गई पार ।।

थल के सम जल पर बढ़ जाये, श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।५।।

खुशी का पार नहीं पाये, पार नदिया से हो जाये।
समय अब उसका बच जाये, व्यर्थ का चक्कर मिट जाये ।।

इक दिन पण्डित ने कहा, जल्दी ले पय आय।
कहे कृपा सब आपकी, चक्कर दिये मिटाय ।।

नाम ले जल पर चढ़ जाये, श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।६।।

कृपा कर मेरे घर आओ, अतिथि बनकर भोजन पाओ।
आप निज कर से बनाओ, मेरा घर पावन कराओ ।।

पण्डित के मन में जँची, खाऊँ मैं तरमाल।
हाँ भर कर के साथ में, निकल पड़ा तत्काल ।।

तटनि के तट पर वे आये, श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।७।।

अहीरी नाम मंत्र ध्याये, नदी के जल पर चढ़ जाये।
थल के सम उस पर बढ़ जाये, वसन भी भीग नहीं पाये ।।

विप्र देख अचरज करे, अपना पांव बढ़ाय।
एक कदम भी नीर पर, वह नाहीं चल पाय ।।

वसन सब उसके भीग जाये, श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।८।।

अहीरी देखे मुड़कर हाल, पुजारी वहीं खड़ा बेहाल।
वस्त्र वह अपने रहा संभाल, लौटकर आई वह तत्काल ।।

पंडित से कहने लगी, क्यों ऐसा है हाल।
आप बताये नाम से, नित्य रही मैं चाल ।।

जल पै वह इधर उधर जाये, श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।९।।

पुजारी कहे नाम लीना, बाद में कदम बढ़ा दीना।
व्यर्थ है मेरा तो जीना, नदी का भय मन में कीना ।।

बोली अहिरी विप्रवर, श्रद्धा नहीं मन माय।
इसीलिए भय आप में, सफल नहीं हो पाय ।।

आत्म में श्रद्धा उपजाये, श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।१०।।

विप्र सुन अब तो शरमाया, श्रद्धा मैं मन में नहीं लाया ।
मैंने तुम्हें ऐसे ही बतलाया, श्रद्धा मैं कभी ना रख पाया ।।

श्रद्धा बिना ले नाम तो, फल नाहीं मिल पाय ।
जप तप सारे ही यहां, व्यर्थ चले सब जाय ।।

अहीरी कहकर हर्षाये, श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।११।।

आज से गुरुणी तुम मेरी, समझ मैं बात गया तेरी ।
श्रद्धा में करूं नहीं देरी, साधना फलित हुई तेरी ।।

प्राज्ञ कृपा 'सोहन' सदा, कहते बारम्बार ।
श्रद्धा रख जिन वचन पर, पाओ भव जल पार ।।

मोक्ष के तट को सब पाये, श्रद्धा से मुक्ति मिल जाये ।।१२।।



१२ | सत्यधारी

[तर्ज—नेम जी की······]

विरले ही होते नर नारी ।
निभाये टेक सत्य धारी ।।

एक दिन आकर शिवजी पास, उमा ने बात कही है खास ।
आई मैं मन में लेकर आश, स्वामी पर पूरा है विश्वास ।।
शंका मेरे मन बनी, देवें आप निवार ।
व्योम सहारा कौन दे, क्या इसका आधार ।।
शंका यह मेरे मन भारी, निभाये टेक सत्य धारी ।।१।।

श्रवण कर शिवजी फरमाये, स्तंभ पर खड़ा है बतलाये ।
सत्य अरु धर्म स्तंभ भाये, उमा कहे नजर नहीं आये ।।
अतः कृपा कर आप वे, स्तंभ मुझे दिखलांय ।
बैठ गई हट कर उमा, शिव उनको समझाय ।।
समझूं नहीं अक्ल गई मारी, निभाये टेक सत्य धारी ।।२।।

चलो धरती पर हम जायें, वेश हम अपना बदलायें ।
रूप हम साधु का पायें, साध्वी आप भी बन जाये ।।
रूप बदल दोनों चले, आये जंगल माय ।
खेत जोतते वृद्ध को, शिवजी यह फरमाय ।।
करो विश्राम थके भारी, निभाये टेक सत्य धारी ।।३।।

जेष्ठ की गर्मी है भारी, तवे सी गर्म धरा सारी ।
झोंपड़ी देख वहाँ प्यारी, ठहरे पा आज्ञा उस वारी ।।
शिव उमा के साथ वहाँ, ठहर गये हैं आय ।
लेने को विश्राम अब, कृषक कुटी के माय ।।
भोजन ले आई कृषक नारी, निभाये टेक सत्य धारी ।।४।।

कृषक भी हल को छोड़ आया, संत-सती लखकर हर्षाया।
भाग्य से दर्शन है पाया, शीश उसने आ नवाया॥
वृद्ध दम्पत्ति देखकर, उमा वहां दरसाय।
दोनों श्रम देखो करें, तेज धूप के माय॥
कहां संतान है तुम्हारी, निभाये टेक सत्य धारी॥५॥
हम दम्पत्ति बने बहिन भाई, पुत्र फिर कैसे हम पाई।
बात नहीं मुझे समझ आई, बैठो तुम पास मेरे माई॥
कहे उमा से कृषक अब, कैसे हो सन्तान।
पति-पत्नी सम्बन्ध तो, हुआ यहाँ अवसान॥
गुजर रहा जीवन सुखकारी, निभाये टेक सत्यधारी॥६॥
कारण मैं समझ नहीं पाई, बात को खोल कहो भाई।
विवाह कर नारी है पाई, हो गई क्या फिर लड़ाई॥
ऐसी घटना क्या घटी, टूट गया सब प्यार।
पति-पत्नी सम्बन्ध में, क्यों पड़ गई दरार॥
बात समझाओ तुम सारी, निभाये टेक सत्य धारी॥७॥
नहीं है हम में यहां दरार, राम व सीता सम है प्यार।
प्यार पर टिका हुआ संसार, प्यार ही दुनिया का आधार॥
बचपन में ही हो गया, इनके संग विवाह।
फेरे लेकर पकड़ ली, हमने अपनी राह॥
नींद हमें आ रही थी भारी, निभाये टेक सत्यधारी॥८॥
गाड़ी अब बढ़ती ही जाये, नींद वहाँ दोनों को आये।
हाथ इसका तन छू जाये, चौंक कर शपथ यह दिलाये॥
अब जो तन को छू लिया, तुम्हें राम की आन।
उम्र निकल इतनी गई, हमने रक्खा ध्यान॥
अखण्डित दोनों ब्रह्मचारी, निभाये टेक सत्यधारी॥९॥
आन तुम अपनी अब तोड़ो, नया सम्बन्ध पुनः जोड़ो।
आज से हठ अपना छोड़ो, जिन्दगी तुम अपनी मोड़ो॥
बात सती की सुन वहाँ, वृद्धा बोली बोल।
राम आन तोड़े नहीं, वरना बने मखोल॥
आपके हम हैं आभारी, निभाये टेक सत्यधारी॥१०॥
समझ गई उमा बात सारी, करो चलने की तैयारी।
सत्य की महिमा है भारी, निभाये सदा धर्मधारी॥
प्राज्ञ कृपा 'सोहन मुनि', करे सत्य की बात।
आन बान पर जो चले, धर्म उसी के साथ॥
बनो सब जग में जयधारी, निभाये टेक सत्य धारी॥११॥

१३ | कुल की आन

[तर्ज—नेम जी की·······]

ध्यान यह रखो सभी नर नार।
तजो मत अपने कुल की कार ।।

सोचले पहले मन मांही, रहेगी इससे शान भाई।
बढ़ेगी शोभा जग मांही, श्रेष्ठ कुल लीना है पाई ।।
याद पूर्वजों की करो, करके हृदय विचार।
आकर इस संसार में, यश पाया अनपार ।।
उसी से जाने यह संसार, तजो मत अपने कुल की कार।

मनुज तो ज्ञानी कहलाये, बड़ाई उसकी क्या गाये।
पक्षी इक चातक है आये, कथा उसकी ही बतलाये ।।
चातक का वृतान्त है, रखली कुल की कार।
प्राण जाय पर प्रण नहीं, मन में रहे विचार ।।
कथा तुम लेना हिय में धार, तजो मत अपने कुल की कार।

एक दिन चातक शिशु आया, प्यास से अति ही घबराया।
मात लख बोली सुन जाया, आज क्यों इतना कुमलाया ।।
बाल कहे माता सुनो, चित मेरा घबराय।
मैं हूँ व्याकुल प्यास से, नीर नहीं मिल पाय ।।
भूमि जल लेऊँ क्या मैं धार, तजो मत अपने कुल की कार।

मात कहे यह नहीं कुल की रीत, हमारी शुद्ध नीर से प्रीत।
हमारे कवि जन गायें गीत, श्रेष्ठ है मेह चातक की प्रीत।

बूंद गिरे आकाश से, धरती ना छू पाय।
सीधी मुंह में आ गिरे, चातक पी हर्षाय ।।
बात कही तुझको है जो सार, तजो मत अपने कुल की कार।

बात सुन मन में घबराये, नीर बिन प्राण निकल जाये।
शुद्ध जल गंगा का पाये, वहीं जा प्यास बुझा आये।।
मात कहे कुलकार को; मत तोड़े तू लाल।
चन्द दिनों तक सहन कर, नहीं पड़ा है काल ।।
अवश्य ही बरसे मेंह की धार, तजो मत अपने कुल की कार।

मेरी तो बढ़ रही प्यास अपार, जेष्ठ की गर्मी का नहीं पार।
करूं क्या उठते हृदय विचार, पानी बिन जीवन अब तो भार ।।
अतः चला मैं जा रहा, गंगा तट के पास।
पीकर सरिता नीर को, बुझा सकूंगा प्यास ।।
बोलकर उड़ गया पंख पसार, तजो मत अपने कुल की कार।

उडान भर एक गांव आया, कृषक घर नीम वृक्ष पाया।
डाल पर निज को बैठाया, बैठ कर मन में हर्षाया।।
इंतजार सुत की करे, पूरा ही परिवार।
शहर गया लौटा नहीं, कारण क्या इस बार ।।
हृदय में चिन्ता बढ़ी अपार, तजो मत अपने कुल की कार।

रात में नींद आये, दम्पति सो भी ना पाये।
समझ में कारण नहीं आये, तभी इक स्वर उनको भाये ।।
पुत्र आ गया जानकर, हर्षित है दिल माय।
किस कारण देरी हुई, दो हमको बतलाय ।।
बहुत की तेरी तो इंतजार, तजो मत अपने कुल की कार।

पुत्र कहे-काम को निपटाया, जल्दी ही निकल मैं तो आया।
राह में थैला इक पाया, उठाकर चिन्ता मन लाया ।।
जिसका थैला है उसे, देने जाऊँ ग्राम।
यही सोच वापिस गया, पहुँचा उसके धाम ।।
भरे थे उसमें तो कलदार, तजो मत अपने कुल की कार।

पुत्र से बात सुनी सारी, पिता कहे पुत्र उचित धारी।
संभला दी रकम उसे सारी, बुद्धि पर जाऊँ बलिहारी ।।

अपने कुल की शान को, रक्खी खूब निभाय ।
सजग समय पर जो रहे, वह सपूत कहलाय ।।
उसी के गुण गाये संसार, तजो मत अपने कुल की कार ।

खुशी मालिक के मन छाई, चकित हो बोला मुझ ताईं ।
धन्य है तुमको तो भाई, थैली लाकर के संभलाई ।
पुरस्कार ले लो अभी, देता हूँ दिल खोल ।
मैं बोला लूंगा नहीं, कहता हूँ सच बोल ।।
तथापि कहे वह बारम्वार, तजो मत अपने कुल की कार ।

चातक ने बात सुनी सारी, हिये में सोचे उस वारी ।
कुल की शान रखी भारी, बात मैं लेऊँ मन धारी ।।
भोर हुई वह लौटकर, आया मां के पास ।
प्राण चले जायें भले, नहीं बुझाऊँ प्यास ।।
आन कुल की राखूं हर बार, तजो मत अपने कुल की कार ।।

चातकी सुनकर हर्षाई, धन्य मैं बनी तेरी मांई ।
खुशी अब मेरे मन छाई, सीने के निकट उसे लाई ।
बेटे मेरे लौटकर, दिया मुझे सम्मान ।
जाते जाते बच गई, चातक कुल पहचान ।।
खुशी में गिरे अश्रु की धार, तजो मत अपने कुल की कार ।

सुनो सब श्रोता धर कर ध्यान, पक्षी से लेओ हृदय में ज्ञान ।
समय है चेतो तुम इंसान, रखो निज कुल की जग में शान ।।
कुलवानों का हाल सुन, होता हृदय विचार ।
नव पीढ़ी जाये किधर, सोचो सब नर नार ।।
आन दी अपनी विगार, तजो मत अपने कुल की कार ।

खान व पान विगड़ जाये, होटलों में निश दिन खाये ।
श्रावक का धर्म भूल जाये, अभक्ष्य का भक्षण कर आये ।।
प्राज्ञ कृपा 'सोहन' सदा, वार वार चेताय ।
सज्जन चेतो समय है, जीवन सरस बनाय ।।
ज्ञान से हो जाये उद्धार, तजो मत अपने कुल की कार ।।



१४ | भाग्य है बन जावे

(तर्ज - नेम जी जान बनी...............)

सुकृत से भाग्य है बन जावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे।

कर्म बिन इच्छा मन लावे, सफलता हाथ नहीं आवे।
ज्ञानी जन निश दिन बतलावे, करें शुभ कर्म जो सुख चावे ।।
एक समय की बात है, रमा भाग्य दोउ आय।
अपनी-अपनी तान कर, निज महिमा बतलाय ।।
सुखी जग मुझसे हो जावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।१।।

रमा कहे सुनो भाग्य भाई, मेरे बिन कहीं सौख्य नाहीं।
रहूँ मैं जिस घर के मांही, दुःख सब जावे बिरलाई ।।
भाग्य कहे सुनले रमा, मेरा ही है मेल।
बिन मेरे बिगड़े सभी, बने बनाये खेल ।।
भाग्य के दुनियां गुण गावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।२।।

रमा कहे मैं हूँ सुखदायी, कहो उसे सुखी करुं जाई।
चला इक क्षत्रिय वहाँ आई, भाग्य ने दिया है फरमाई ।।
इसको सुखी बनाइये, करके मालोमाल।
तब महिमा जानूं रमा, जब यह होय निहाल ।।
मेरे बिन कैसे रह पावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।३।।

क्षत्रिय के निकट रमा आई, कर में कंकण रख हर्षाई।
देना निज नारी को जाई, सुखी वह होगी यह पाई ।।
ले कंकण निज हाथ में, क्षत्रिय हुआ विभोर।
जैसी आज्ञा आपकी, वह बोला कर जोर ।।
देख वह कंकण इतरावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।४।।

अपने कुल की शान को, रक्खो खूब निभाय ।
सजग समय पर जो रहे, वह सपूत कहलाय ।।
उसी के गुण गाये संसार, तजो मत अपने कुल की कार ।

खुशी मालिक के मन छाई, चकित हो बोला मुझ ताई ।
धन्य है तुमको तो भाई, थैली लाकर के संभलाई ।
पुरस्कार ले लो अभी, देता हूँ दिल खोल ।
मैं बोला लूंगा नहीं, कहता हूँ सच बोल ।।
तथापि कहे वह बारम्बार, तजो मत अपने कुल की कार ।

चातक ने बात सुनी सारी, हिये में सोचे उस वारी ।
कुल की शान रखी भारी, बात मैं लेऊँ मन धारी ।।
भोर हुई वह लौटकर, आया मां के पास ।
प्राण चले जायें भले, नहीं बुझाऊँ प्यास ।।
आन कुल की राखूं हर बार, तजो मत अपने कुल की कार ।।

चातकी सुनकर हर्षाई, धन्य मैं बनी तेरी मांई ।
खुशी अब मेरे मन छाई, सीने के निकट उसे लाई ।
बेटे मेरे लौटकर, दिया मुझे सम्मान ।
जाते जाते बच गई, चातक कुल पहचान ।।
खुशी में गिरे अश्रु की धार, तजो मत अपने कुल की कार ।

सुनो सब श्रोता धर कर ध्यान, पक्षी से लेओ हृदय में ज्ञान ।
समय है चेतो तुम इंसान, रखो निज कुल की जग में शान ।।
कुलवानों का हाल सुन, होता हृदय विचार ।
नव पीढ़ी जाये किधर, सोचो सब नर नार ।।
आन दी अपनी विगार, तजो मत अपने कुल की कार ।

खान व पान बिगड़ जाये, होटलों में निश दिन खाये ।
श्रावक का धर्म भूल जाये, अभक्ष्य का भक्षण कर आये ।।
प्राज्ञ कृपा 'सोहन' सदा, वार वार चेताय ।
सज्जन चेतो समय है, जीवन सरस बनाय ।।
ज्ञान से हो जाये उद्धार, तजो मत अपने कुल की कार ।।



१४ भाग्य है बन जावे

(तर्ज - नेम जी जान बनी...............)

सुकृत से भाग्य है बन जावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।

कर्म बिन इच्छा मन लावे, सफलता हाथ नहीं आवे ।
ज्ञानी जन निश दिन बतलावे, करें शुभ कर्म जो सुख चावे ।।
एक समय की बात है, रमा भाग्य दोउ आय ।
अपनी-अपनी तान कर, निज महिमा बतलाय ।।
सुखी जग मुझसे हो जावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।१।।

रमा कहे सुनो भाग्य भाई, मेरे बिन कहीं सौख्य नाहीं ।
रहूँ मैं जिस घर के मांही, दुःख सब जावे विरलाई ।।
भाग्य कहे सुनले रमा, मेरा ही है मेल ।
बिन मेरे बिगड़े सभी, बने बनाये खेल ।।
भाग्य के दुनियां गुण गावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।२।।

रमा कहे मैं हूँ सुखदायी, कहो उसे सुखी करुं जाई ।
चला इक क्षत्रिय वहाँ आई, भाग्य ने दिया है फरमाई ।।
इसको सुखी बनाइये, करके मालोमाल ।
तब महिमा जानूं रमा, जब यह होय निहाल ।।
मेरे बिन कैसे रह पावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।३।।

क्षत्रिय के निकट रमा आई, कर में कंकण रख हर्षाई ।
देना निज नारी को जाई, सुखी वह होगी यह पाई ।।
ले कंकण निज हाथ में, क्षत्रिय हुआ विभोर ।
जैसी आज्ञा आपकी, वह बोला कर जोर ।।
देख वह कंकण इतरावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।४।।

लक्ष्मी ने कंकण जो दीना, प्रेम से क्षत्रिय ने लीना।
नारी के कर का यह गहना, सोच निज नारी को दीना ।।
पहन उसे नारी चली, सर पर लेने नीर।
कर से कंकण गिर गया, हो गई वह अधीर ।।
ढूंढे पर वह ना मिल पावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।५।।

चेहरे की रंगत विरलाई, आई वह घर पर घबराई।
शिथिल था ध्यान रहा नाहीं, गिरा वह पानी के मांही ।।
क्षत्रिय कहे चिन्ता तजो, जाऊँ जंगल मांय।
पुनः रमा से हार ले, दूंगा तुझे पहनाय ।।
हार लेने को वन जावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।६।।

रमा से बात कही सारी, नारी की बुद्धि गई मारी।
करती क्या वह भी बेचारी, पानी में ढूंढ ढूंढ हारी ।।
कंकण बिन नारी हुई, मेरी बहुत उदास।
देकर अपना हार तुम, भर दो नया उजास ।।
हार पा वन में सो जावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।७।।

चील एक उड़ती वहां आई, हार ले उड़ी पंजों मांही।
वस्तु का मूल्य ज्ञात नाहीं, नीड़ में धर दीना जाही ।।
नींद खुली तो लख रहा, क्षत्रिय अब चहुँ ओर।
नहीं मिला रोने लगा, हाय ले गया चोर ।।
ढूंढता ढूंढता थक जावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।८।।

रमा भी चलकर वहाँ आई, दशा लख उसकी दुःख पाई।
दया कर बोली यों भाई, कहूँ वह करना तू जाई ।।
तेरे घर में हैं गढ़े, चार घड़े दीनार।
जाकर उन्हें निकालना, करना मम जयकार ।।
बात कह रमा चली जावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।९।।

पड़ोसी लुक छिप कर आया, भेद जाना तो हर्षाया।
क्षत्रिय से पहले घर आया, गढ़ा धन खोद वह लाया ।।
क्षत्रिय घर आ देखता, गड्ढे खाली चार।
चोर चुरा धन ले गये, चिन्ता हृदय अपार ।।
सिर को पकड़ बैठ जावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।१०।।

रमा अब सोचे मन मांही, भाग्य बिन धन रहता नाहीं ।
चली वह भाग्य पास आई, भाग्य तू जीत गया भाई ।।
समझ गई सब बात मैं, बस नहीं चलता एक ।
मेरी चल पाई नहीं, रख भाई तू टेक ।।
आप अब अपनी दिखलावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।११।।

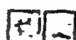
भाग्य क्षत्रिय निकट आया, पैसा इक देकर मुस्काया ।
पैसा पा क्षत्रिय हर्षाया, मच्छ बाजार से ले आया ।।
मच्छ उठाये हाथ में, लेकर मन उल्लास ।
कब चीरूं मैं मच्छ को, पहुँचू पत्नी पास ।।
मच्छ को चीर उछल जावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।१२।।

गया कंकण घर में आया, मच्छ के उदर में है पाया ।
भाग्य की हम पर है छाया, लौटकर पास यह आया ।।
ले कंकण निज हाथ में, नाचे वे घर मांय ।
क्षत्राणी सीने लगा, रह रह कर हर्षाय ।।
लिखा उसे छीन कौन पावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।१३।।

पुनः अब वन में मैं जाऊँ, लकड़ियाँ सूखी ले लाऊँ ।
वृक्ष हरे काटूं न कटवाऊँ, गुरु ने कहा वो बतलाऊँ ।।
ऐसा कहकर चल दिया, पहुँचा जंगल माँय ।
शुष्क वृक्ष पर जा चढ़ा, देख दृश्य हर्षाय ।।
डाल पर टंगा हार पावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।१४।।

हार संग लकड़ी वह लाया, पत्नी को आकर बतलाया ।
मिल गया जोर से चिल्लाया, भाग्य से मैंने फिर पाया ।।
शोर पड़ोसी ने सुना, सोचा बिगड़ा खेल ।
घड़े वहीं जाकर धरूं, वरना होगी जेल ।।
घड़े चुपचाप ही रख जावे, भाग्य ही लक्ष्मी ले आवे ।।१५।।

भाग्य से गया द्रव्य आया, अहिंसा पथ है अपनाया ।
पाप है हिंसा सिखलाया, सुकृत कर पाओ मन चाया ।।
प्राज्ञ कृपा 'सोहन' कहे, जग से वारम्बार ।
धर्म कमाई जो करें, वे जावें भव पार ।।
आतमा सिद्ध स्थान पावे, भाग्य से लक्ष्मी ले आवे ।।१६।।



१५ | मन क्यों भरमाया

(तर्ज : नेम जी की..............)

कीमती वक्त हाथ आया।
माया में मन क्यों भरमाया।।
समय को खोकर पछताया, गया जो वक्त नहीं आया।
खो दिया हाथ यहां आया, प्रभु गुण कब तुमने गाया ।।१।।

उज्ज्वलपुर इक शहर में, नरसिंह नृपति राय।
रखे प्रजा से नेह नित, सभी तरह सुखदाय ।।
दान दे नृप नित मनचाया, माया में मन क्यों भरमाया ।।२।।

नगर में विप्र भोला नामी, जन्म से निर्धनता पामी।
अर्थ की घर में है खामी, अन्न का रहे नित्य कामी ।।
चाहे जितना श्रम करे, मिले ना पूरा धान।
बोली नारी तंग हो, लो तुम मेरी मान ।।
दीन को धन दे महाराया, माया में मन क्यों भरमाया ।।३।।

विप्र के जमी हृदय मांही, भूप के द्वार चला आई।
नमन कर उसने दरसाई, भूख से कष्ट रहा पाई ।।
सारी वात सुन भूपति, मन में किया विचार।
प्रजा दुःखी मेरी यदि, मुझको है धिक्कार ।।
पट्टा लिख उसको दिलवाया, माया में मन क्यों भरमाया ।।४।।

लिखा यह पट्टे के मांही, बाँध ले गांठें मन चाही।
संध्या तक खुला कोष यांही, लेने की नहीं है मनाही ।।
संध्या होते हो गया, बंद यहाँ पर कोष।
आलस तुमने जो किया, मत देना फिर दोष ।।
पट्टा पा ब्राह्मण हर्षाया, माया में मन क्यों भरमाया ।।५।।

सोचे वह पहले घर जाऊँ, नारी को सब कुछ बतलाऊँ ।
पट्टा जा उसको दिखलाऊँ, लौट कर धन को मैं पाऊँ ।।
घर आकर कहने लगा, अब मैं मालामाल ।
आज खिला दो तुम मुझे, यहाँ चूरमा दाल ।।
आज तो खाऊं मन चाया, माया में मन क्यों भरमाया ।।६।।

बोली वह घर में न सामान, कहाँ है घी शक्कर व धान ।
उधार ही ले आ तू नादान, पेट भर खाऊँगा कर ध्यान ।।
आस पास कर याचना, लाई वह सामान ।
खाके दाल व चूरमा, विप्र हुआ मस्तान ।।
थोड़ा मैं सोऊं मन लाया, माया में मन क्यों भरमाया ।।७।।

सोते ही नींद गहरी आई, दुपहरी बीत गई भाई ।
आ नार ने दीना जगाई, नहीं सोने में भलाई ।।
उठकर के वह चल दिया, आया अब बाजार ।
खेल नटी दिखला रही, कीना हृदय विचार ।।
देखलूं सन्मुख यह आया, माया में मन क्यों फरमाया ।।८।।

खेल में ध्यान रहा नाहीं, लगा दी पहर उसी मांही ।
पट्टे को दीना विसराई, सूर्य भी छुपा क्षितिज मांही ।।
चलकर आया राज में, कोष हो गया बन्द ।
बिन पूछे क्यों जा रहा, अरे वुद्धि से अंध ।।
शाम हुई अब तू क्यों आया, माया में मन क्यों भरमाया ।।९।।

समय का ध्यान नहीं लाया, अब तो वह रह रह पछताया ।
जान लो नर भव यह पाया, समझ जो इसे नहीं पाया ।।
धर्म साधना के विना, जो दे समय गंवाय ।
वह मानव ही विप्र सम, आ जग में पछताय ।।
सजग रहो उत्तम भव पाया, माया में मन क्यों भरमाया ।।१०।।

प्राज्ञ कृपा मुनि 'सोहन' चेताय, भवि हो वही ध्यान में लाय ।
करे नित सामायिक स्वाध्याय, मिला यह जीवन सफल बनाय ।।
त्रस अरु स्थावर जीव की, करें रक्षा का ध्यान ।
सुखी बनाये जगत को, हृदय धरे नित ज्ञान ।।
मुक्ति सुख उसने ही पाया, माया में मन क्यों भरमाया ।।११।।

१६ | स्नेह-शक्ति

[तर्ज—नेम जी की·······]

सुखी वह गृहस्थ बने भाई।
स्नेह को ले जो अपनाई ।।

खुशी खुशी से दिवस निकलते जाये, इक दूजे को देख सुखी हो जाये।
वाणी से मीठे शब्द नित्य बरसाये, धर्म-गुरु की महिमा वे नित गाये ।।
आपस में यदि प्रेम तो, सुखी सभी बन जाय।
गृहस्थी में कलह रहे, धिक धिक वह कहलाय ।।
नीति नित वचन रही गाई, स्नेह को ले जो अपनाई ।।१।।

कथा यह समझो अब सारे, सदा ही हृदय इसे धारे।
नींद संग तज आलस प्यारे, धर्म की महिमा उच्चारे ।।
रहता था इक गांव में, छोटा सा परिवार।
मां बेटा दो बेटियां, एक बहू सुखकार ।।
बहू बहकावे में आई, स्नेह को ले जो अपनाई ।।२।।

ननदों से बैर रखे भारी, कर्कसा हो गई वह नारी।
हो गई वह तो खूंख्वारी, ननदों ने समता मन धारी ।।
सासू को भी बोल दे, जो भी मन में आय।
पति हमेशा पत्नी को, स्नेह सहित समझाय ।।
गृहस्थी सुख कैसे आई, स्नेह को ले जो अपनाई ।।३।।

पुरुष दो इस जग के मांही, चले मां पितु आज्ञा ताँही।
मातृ दुःख सहन करे नांही, रूठे तो उसे मना ले ही ।।
ऐसे सुत का जगत में, होता है सम्मान।
सेवा का मेवा मिले, कहता धन्य जहान ।।
गणना हो उत्तम नर भाई, स्नेह को ले जो अपनाई ।।४।।

दूसरा रखे ध्यान नारी, रहे उसका आज्ञाकारी।
देवे वो तात-मात छारी, समझे वह सब कुछ मम नारी ।।
पत्नी की ही बात को, मान करे जो काम।
ऐसे नर को जानिए, जोरू का गुलाम ।।
भार वे भू पर बन जाई, स्नेह को ले जो अपनाई ।।५।।
पति नित देखे बहू का काम, जाती कहाँ यह सुबह शाम।
निकलती जंगल का ले नाम, पति भी देखे बात तमाम ।।
दूर खड़ा पति देखता, नहीं बहू का ध्यान।
सूर्य अर्क दे कह रही, सुन मेरी भगवान ।।
देर क्यों इतनी हो पाई, स्नेह को ले जो अपनाई ।।६।।
पास इक पौधे के आये, शीश वह उसको झुकाये।
भावना मेरी फल जाये, तू देर मत माता लगाये ।।
शंका सोली अर्चना, करती आकर पास।
मुझ पर माता कर कृपा, मरे ननदें व सास ।।
बात तू सुनले अब मांई, स्नेह को ले जो अपनाई ।।७।।
पति भी पास चला आया, कंटाला उसने वहां पाया।
शीश आ उसको झुकाया, नित्य यहाँ मैंने समझाया ।।
ऊँट कंटाला मेरी, तू अब तो अरदास।
दो सालों के संग में, मर जाये झट सास ।।
कृपा तुम कर दो अब भाई, स्नेह को ले जो अपनाई ।।८।।
चमक गई पति देख नारी, पोल तो खुल गई है सारी।
चलाऊँ त्रिया-चरित्त भारी, नहीं तो पति देवे छारी ।।
त्रिया चरित करके यहाँ, देऊं चक्र चलाय।
पति मेरा बोले नहीं, समझ नहीं कुछ पाय ।।
चरित्र कर गिरी चौक मांही, स्नेह को ले जो अपनाई ।।९।।
गिर के अब वह तो चिल्लाये, परिजन दौड़ दौड़ आये।
ननदें व सास भी घबराये, देव कोई इसके तन छाये ।।
हाथ जोड़ कर सास ने, कहा सुनो हे नाथ।
क्षमा करिये अबोध को, कहो मुझे क्या बात ।।
पड़ूं मैं चरण पांव मांही, स्नेह को ले जो अपनाई ।।१०।।
नित्य यह जंगल में जाये, वहां यह मुझको सताये।
धैर्य हम जब नहीं रख पाये, चले इस तन में हैं आये ।।
मन मेरी पूरी करो, कहना मेरा मान।
वरना लेकर जाऊँ मैं, इस अबला की जान ।।
रही वह सिर को हिलाई, स्नेह को ले जो अपनाई ।।११।।

सास को जल्दी बुलवायें, बाल झट सिर के मुंडवायें।
काला मुख उसका करवायें, पांव को नीले रंगवायें।।
श्वेत वस्त्र को धार कर, खर ऊपर चढ़ जाय।
फूटा ढोल बजाय कर, मेरी देहरी आय।।
फेरे वह सात आय खाई, स्नेह को ले जो अपनाई।।१२।।
सास को देख रहे सब लोग, देव तो मांगे बाल का भोग।
बहू का टल जाये यह रोग, करो कुछ उत्तम आया योग।।
माता सुत के पास आ, कह दी सारी बात।
सुत बोला चिन्ता तजो, मां कटने दो रात।।
ठीक कल होते ही हो जाई, स्नेह को ले जो अपनाई।।१३।।
चला पति ससुर गृह आया, सास को दु:खड़ा बतलाया।
सुता के मोह ने भरमाया, शीश को उसने मुंडवाया।।
मुंह काला करवा वहां, नीले करके पांव।
श्वेत वस्त्र खर पर चढ़ी, पहुँची बेटी गाँव।।
देखे वह पीछे हो जाई, स्नेह को ले जो अपनाई।।१४।।
सन्देशा घर पर भिजवाया, माता को वहीं पै छुपवाया।
नारी को वन में बुलवाया, किया जो उसको दिखलाया।।
पत्नी बोली चहक कर, मुह काला सिर साफ।
मेरा सोचा हो गया, किया बहू को माफ।।
हिलता सिर बहू का रुक जाई, स्नेह को ले जो अपनाई।।१५।।
पति भी पास में आ जाये, नारी को आकर बतलाये।
हृदय में गर्व नहीं लाये, सास के पास जरा जाये।।
जरा ध्यान से देखना, फिर करना उल्लास।
मेरी तेरी जान लें, चढी गधे पर सास।।
नारी सुन यह तो घबराई, स्नेह को ले जो अपनाई।।१६।।
गधे के पास वह आई, अंधेरी आँखों में छाई।
चीख कर वह तो चिल्लाई, माता क्यों समझ नहीं पाई।।
दशा देख निज मात की, सुता वहां शरमाय।
पाँव पकड़ कर सास के, अपनी भूल बताय।।
सीने से लिया है लगाई, स्नेह को ले जो अपनाई।।१७।।
चले सब घर को वे आये, क्षमा सब उसको कर जाये।
भाव आदर का नहीं लाये, गृहस्थी चल वहां नहीं पाये।।
प्राज्ञ कृपा 'सोहन मुनि', जीवन स्वर्ण बनाय।
प्रेम भाव घर में रहे, स्वर्ग वहाँ पर आय।।
कर्तव्य को मत भूलो भाई, स्नेह को ले जो अपनाई।।१८।।

१७ | चाह तजो

[तर्ज—नेम जी की.......]

उमरिया छोटी सी पाई ।
चाह तू तज दे रे भाई ।।

चाह का कहीं अन्त ना होय, चाह में मानव निश दिन रोय ।
चाह की खाड भरे ना कोय, चाह में नहीं चैन से सोय ।।
चाह गई चिन्ता गई, त्यागे जो भी चाह ।
चाह अगर जो छोड़ दे, मिट जाये सब आह ।।
मस्ती उसने ही बस पाई, चाह तू तज दे रे भाई ।।१।।

स्वर्ग पति मन में यह लाया, स्वर्ग का भवन नहीं भाया ।
बनाऊँ मैं तो मन चाया, किसी ने नहीं जो बनवाया ।।
अमर पति ने उसी समय, दूत भेज तत्काल ।
बुला विश्वकर्मा तुरत, समझाया सब हाल ।।
भवन तुम भव्य दो बनवाई, चाह तू तजदे रे भाई ।।२।।

आज्ञा सुन हृदय में धारी, खिली उसके मन की क्यारी ।
नक्शे की करली तैयारी, इन्द्र ले उसको स्वीकारी ।।
चित्र देखा तो सुरपति, नहीं समझ में आय ।
ऐसा नक्शा लाइये, मम मन खुश हो जाय ।।
अनेकों नक्शे दिखलाई, चाह तू तजदे रे भाई ।।३।।

पसन्द नहीं कोई भी आया, विश्व कर्मा भी है घबराया ।
विचार सुरपति मन में लाया, ध्यान लोमस ऋषि का आया ।।
महा ऋषि लोमस मुनि, सचमुच सन्त महान ।
बिन आश्रम के घूमते, आया मुझको ध्यान ।।
लिया अब उनको बुलवाई, चाह तू तजदे रे भाई ।।४।।

इन्द्र कहे सुनो ऋषि राई, बनालो आश्रम निज ताई।
स्थान हो सुन्दर सुखदायी, भटकना पड़े कभी नाहीं ।।
यह बात सुनि बोले मुनि, सुनो आज सुरराय।
मुझको जरूरत है नहीं, ठहर कहीं हम जाय ।।
चाह नहीं आश्रम की आई, चाह तू तजदे रे भाई ।।५।।

चाहे तो किससे बनवायें, इन्द्र कहे आज्ञा फरमायें।
अभी ही नंदन वन जायें, विश्व कर्मा हम भिजवायें ।।
हँसकर बोले वहां ऋषि, आप न कष्ट उठाय।
क्या करूं बनवा के मैं, अल्प जिन्दगी पाय ।।
पडूं क्यों मैं झंझट मांही, चाह तू तजदे रे भाई ।।६।।

बात सुन शचिपति दरसाये, आयुष्य है कितना फरमाये।
अभी तक कितनी उम्र पाये, कृपा कर मुझको बतलाये ।।
बोले ऋषि सुरपति सुनो, दूं आयु बतलाय।
एक इन्द्र जब तक रहे, एक केश गिर जाय ।।
देखलें वक्ष स्थल मांही, चाह तू तजदे रे भाई ।।७।।

अनुक्रम से गिरतें जाये, इंच भर खाली हो जाये।
निकलता जीवन यह जाये, चाह क्यों मन में अब लाये ।।
ऐसे सारे देह के, गिर जायेंगे बाल।
तभी समझ लो आप तो, होगा मेरा काल ।।
पहले मैं मरने का नाहीं, चाह तू तजदे रे भाई ।।८।।

इन्द्र सुन विस्मय मन लाया, कितने दिन की मेरी काया।
बनाऊँ भवन हृदय लाया, चाह को मन से विसराया ।।
प्राज्ञ कृपा 'सोहन मुनि', तज दे मन की चाह।
चाह अगर मन की मिटे, खुले मुक्ति की राह ।।
चाह जीवन में दुःखदायी, चाह तू तजदे रे भाई ।।९।।



१८ | गुरु की शिक्षा

[तर्ज—नेम जी की·······]

सफल हो उसकी जिन्दगानी ।
हृदय जो धारे गुरु वाणी ।।

वचन पर श्रद्धा नित लाये, पार वह इस जग से पाये ।
कष्ट सब उसके विरलाये, जगत में सुख सम्पत्ति पाये ।।
मधुपुर सुन्दर शहर का, मधु सूदन भूपाल ।
दीन जनों की वह सदा, पूर्ण करे संभाल ।।
राजा तो अद्भुत है दानी, हृदय जो धारे गुरु वाणी ।।१।।

संत एक नगरी में आया, राजा से मान बड़ा पाया ।
देख कर मन में हर्षाया, नृपति को उन ने दरसाया ।।
तीन बात हैं लाख की, जानो तुम जग सार ।
ध्यान लगा सुनकर इन्हें, लेओ मन में धार ।।
भूल मत जाना तुम वाणी, हृदय जो धारे गुरु वाणी ।।२।।

ब्रह्म मुहूर्त में जग जाओ, आये को आदर दिलवाओ ।
शान्ति से क्रोध को पी जाओ, सीख यह तुम ना विसराओ ।।
तीन वातें सुन भूपति, लीनी हृदय उतार ।
ब्रह्म मुहूर्त में वह नित, जपता प्रभु हर बार ।।
नित भ्रमण को जाये सैलानी, हृदय जो धारे गुरु वाणी ।।३।।

एक दिन नजर उसे आया, गगन में है नारी काया ।
उसने रो अश्रु टपकाया, देख नृप विस्मय मन लाया ।।
नृप पूछे तुम कौन हो, देओ मुझे वताय ।
रोने की क्या वात है, नैन नीर क्यों आय ।।
सिसकती कहे वो कहानी, हृदय जो धारे गुरु वाणी ।।४।।

गिरि से नाग निकल आये, भूप को आकर डस जाये।
काया में जहर फैल जाये, यहाँ का भूपति मर जाये।।
ज्ञान वान नरनाथ को, खा जायेगा काल।
यही सोच मैं रो रही, आंसू अपने डाल।।
कोष की मैं हूँ रमा रानी, हृदय जो धारे गुरु वाणी।।५।।

बात सुन नृप नगरी आया, चिन्ता में कुछ भी ना खाया।
सभा को उसने बुलवाया, सुना जो सबको बतलाया।।
कुछ कहते भ्रम हो गया, भूल इसे अब जांय।
किन्तु भूप के हृदय में, ध्यान वही बस आय।।
पद्मा की मिथ्या नहीं वाणी, हृदय जो धारे गुरु वाणी।।६।।

जल्दी उठने का फल पाया, संत प्रति श्रद्धा मन लाया।
काल का पता यहां पाया, करूं उपाय भाव लाया।।
राज कँवर मेरे नहीं, कँवरी यौवन पाय।
पुरुष वेश धारण करा, दूं गादी बैठाय।।
भूप मन मांही यह आनी, हृदय जो धारे गुरु वाणी।।७।।

जवांई उत्तम यदि पाऊँ, कँवरी कर पीले कर जाऊँ।
रानी को जाकर समझाऊँ, पुत्री का वेश भी बदलाऊँ।।
तभी अचानक संत की, बात याद यह आय।
आये का आदर करो, अब तो हुक्म सुनाय।।
नाग की करना अगवानी, हृदय जो धारे गुरु वाणी।।८।।

नाग जिस पथ से है आये, सुगन्धित सुमन बिछवाये।
प्याले कई पय के रखवाये, नाग पा स्वागत हर्षाये।।
जिसको डसने के लिए, आया मैं इस बार।
उसने ही मेरा किया, कितना यह सत्कार।।
हो गया वह पानी पानी, हृदय जो धारे गुरु वाणी।।९।।

मधुर पय पान करता जाये, सुमनों की सौरभ को पाये।
भूप को बैठा वह पाये, नृपति कहे डस मुझको जाये।।
नागराज सुनकर वहाँ, नर भाषा प्रकटाय।
पा हम तो सत्कार को, अति प्रसन्न मन माय।।
देऊँ वर मन में है ठानी, हृदय जो धारे गुरु वाणी।।१०।।

भूप निज इच्छा बतलाये, आप से प्राणी सुख पाये ।
नाग कहे बात हृदय भाये, डसू, नहीं करके प्रण जाये ।।
नृप को वर देकर त्वरित, निकल गया वह नाग ।
धन्य धन्य है संत को, जागे मेरे भाग ।।
बात है उनकी सुहानी, हृदय जो धारे गुरु वाणी ।।११।।

भूप चल महलों में आया, बात वहाँ देख क्रोध छाया ।
पुरुष पर रानी महल पाया, रानी ने गले से लगाया ।।
अभी मरा मैं तो नहीं, रानी का यह हाल ।
इसके टुकड़े मैं करूं, दूं कुत्तों को डाल ।।
असि अब उसने है तानी, हृदय जो धारे गुरु वाणी ।।१२।।

चढ़ गया नृप का अब पारा, खेल मैं खत्म करूं सारा ।
नयन में धधका अंगारा, बनूं मैं चाहे हत्यारा ।।
संत वचन को याद कर, त्यागा नृप ने क्रोध ।
शान्त भाव से मैं यहाँ, करलूं पहले बोध ।।
नृप तो वह पूरा था ज्ञानी, हृदय जो धारे गुरु वाणी ।।१३।।

नींद रानी की खुल जाये, देख वह नृप को मुस्काये ।
कौन नर महलों में आये, भेद सब मुझको बतलाये ।।
स्वामी के आदेश पर, धारे कँवरी वेश ।
फिर क्यों स्वामी आपके, आया मन आवेश ।।
अभी हो जाती नादानी, हृदय जो धारे गुरु वाणी ।।१४।।

वचन जो गुरुजन का धारे, वही नर दुःख अपने टारे ।
यह जिन्दगी वो ही संवारे, धर्म के जो जाये द्वारे ।।
प्राज्ञ कृपा 'सोहन मुनि', इस जग को समझाय ।
गुरु की शिक्षा को कभी, मन से ना विरलाय ।।
बात यह सब ही लो जानी, हृदय जो धारे गुरु वाणी ।।१५।।



१९ | दृष्टि-भ्रम

(तर्ज—नेम जी की...............)

यह जगत की रीति बतलाये।
जैसे को वैसा नजर आये ।।

सुखी को सुखी नजर आये, दुःखी को नजर दुःखी आये।
ज्ञानी जन सच ही फरमायें, मिथ्या वे कभी न बतलायें ।।
भूखा मानव सोचता, भूखा है संसार।
पेट भरा जिसका यहाँ, उसके वही विचार ।।
वह भूख को जान नहीं पाये, जैसे को वैसा नजर आये ।।१।।

नगर महिमण्डनपुर मांही, भूप सज्जन सिंह है वाहीं।
सप्त गुण कमी कछु नाहीं, प्रजा हित राजा सुखदायी ।।
सोचे भूपति एक दिन, कौन नगर के मांय।
जीवन कैसा जी रहे, कितनी किसकी आय ।।
पता हम सब जन का पाये, जैसे को वैसा नजर आये ।।२।।

पता मैं सबका लगवाऊँ, दुःखी को सुखिया बनवाऊँ।
सभी का हित मैं करवाऊँ, सुखी कर मन में सुख पाऊँ ।।
ऐसा मन में सोचकर, चला सभा में आय।
कालू नापित देखकर, उसको पास बुलाय ।।
आज्ञा सुन नापित हर्षाये, जैसे को वैसा नजर आये ।।३।।

स्वामी जो आज्ञा है दीजै, काम इस सेवक से लीजै।
भूपति बोले यह कीजै, दुःखी जन कौन यहाँ छीजै ।।
नापित बोला नगर में, सुखी सभी नर राय।
कुछ सोना इक भैंस तो, हर घर में मिल जाय ।।
कमी कहीं नजर नहीं आये, जैसे को वैसा नजर आये ।।४।।

बात सुन राजा हर्षाया, मंत्री को कहकर मुस्काया।
मंत्री ने कहा हे महाराया, झूठ नापित ने दरसाया ।।

नापित पूरा धूर्त है, यह सब उसके पास।
वह मूरख क्या जानता, कितना कौन उदास ।।

कौन यहाँ आंसू टपकाये, जैसे को वैसा नजर आये ।।५।।

सुखी को खबर पड़े नाहीं, कष्ट में मालूम हो जाई।
पता कुछ दिन में लग जाई, वही आ देगा बतलाई ।।

चन्द दिनों के बाद ही, तस्कर घर में आय।
भैंस सहित वे स्वर्ण सब, नापित का ले जाय ।।

हृदय से नापित दुःख पाये, जैसे को वैसा नजर आये ।।६।।

मंत्री आ भूपति को दरसाय, पूछें अब नापित को बुलवाय।
दुःखी क्या नजर नहीं है आय, बात अब अपनी का बतलाय ।।

नापित को बुलवाय कर, राजा रखे विचार।
कौन दुःखी है राज्य में, जानों हृदय मझार ।।

बात सुन नापित दरसाये, जैसे को वैसा नजर आये ।।७।।

नाथ मैं गया नगर के मांय, सुखी अब नजर न कोई आय।
पेट भर भोजन ना मिल पाय, भूख से नगर रहा चिल्लाय ।।

सुनकर सारी बात को, समझ गया भूपाल।
अपने सम ही देखता, नापित सबका हाल ।।

नयनों पर पर्दा है छाये, जैसे को वैसा नजर आये ।।८।।

प्रजा का राजा रखता ध्यान, घूम फिर करता पूरा ज्ञान।
सभी का करता वह सम्मान, गरीबों को वह देता दान ।।

श्रीमंतो उत्तम कथा, लेना हृदय जमाय।
अपने सम कोई नहीं, मिलता जग के माय ।।

बदल मौसम भी नित जाये, जैसे को वैसा नजर आये ।।९।।

कर्म की महिमा लो तुम जान, पुण्य का फल लेओ पहचान।
कर्म शुभ करलो नित इंसान, पाप की ओर न देना ध्यान ।।

प्राज्ञ कृपा 'सोहन मुनि' सबको ही चेताय।
थोड़ा जीवन है यहाँ, लेओ पुण्य कमाय ।।

समय नहीं लौट कभी आये, जैसे को वैसा नजर आये ।।१०।।

२० | न इधर का न उधर का

(तर्ज—रे जीवा.................)

रे लाला-उत्तम नर भव पायने, करले आतम काज रे लाला।
यह अवसर फिर ना मिले, कहते सद्‌गुरु आज रे लाला।
समझ-समझ अवसर मिला ॥

आलस-निद्रा त्याग करले, तू शुभ धर्म-ध्यान रे लाला।
वरना फिर पछताना होगा, कुछ करले तू ज्ञान रे लाला।
शुभ कर्मों से नर तन पाया, क्यों भ्रम में भरमाय रे लाला।
मोह माया में उलझ गया, जीवन व्यर्थ गुमाय रे लाला।
कथा कहूं एक सेठ की, सुनले चित्त लगाय रे लाला।
आशा ही आशा में रहकर, भूख में दिवस बिताय रे लाला ॥

बसन्तपुरी में श्रेष्ठीगण, बसे सभी सुख माय रे लाला।
स्नेह-भाव से सब रहे, प्रेम बहुत दरसाय रे लाला।
आनंद में दिन बीतते, पा रहे लाभ अपार रे लाला।
यश फैला चहुँ ओर ही, गुण गाये नर नार रे लाला।
एक दिवस एक सेठ के, ऐसी मन में आई रे लाला।
स्नेह भोज दूं नगर को, मन की बात बताई रे लाला ॥

पुत्र जन्म की है खुशी, लेऊँ नगर बुलाय रे लाला।
भव्य भोज देकर यहाँ, लेऊँ खुशी मनाय रे लाला।
हलवाई बुलवा लिए, जो उसने बतलाई रे लाला।
वही मिठाई सेठ ने, अब देखो बनवाई रे लाला।
सपरिवार निमंत्रण पाकर, करे अमृत सेठ विचार रे लाला।
आज शाम का भोज है, क्यों घर करूं बिगार रे लाला ॥

समय हुआ सेठानी बोली, भोजन है तैयार रे लाला।
मन में सोचे भोज में, लेना है आहार रे लाला।
सुन सेठानी भूख नहीं है, मत मेरा करो विचार रे लाला।
दो लोटे पानी पी लूंगा, यह मेरा आधार रे लाला।
बोली सेठानी पड़ मत जाना, आप कहीं बीमार रे लाला।
कम खाने वाला नहीं मरता, समझे समझदार रे लाला॥

घर से चलकर हाट पर, आया अमृत सेठ रे लाला।
डटके भोजन कर लिया, फूला उसका पेट रे लाला।
लोगों को बतलाने खातिर, पेट पे हाथ फिराये रे लाला।
झूठी डकारें बैठे बैठे, बार बार वह खाये रे लाला।
उसी नगर के सेठ दो सोचें, अपने मन अन्दर रे लाला।
उछल उछल वे बातें करते, उछले ज्यों बन्दर रे लाला॥

सहभोज विफल हो जावे, मन में ईर्ष्या भाव रे लाला।
काम बिगाड़ू दुष्ट आदमी, मिले नगर हर गाँव रे लाला।
दोनों मिलकर यह कहें, गर्व सेठ के छाय रे लाला।
अपने को क्या समझता, क्यों वह इतराय रे लाला।
गर्व चूर उसका करें, अक्ल ठिकाने आय रे लाला।
हम भी कम उससे नहीं, अब देना बतलाय रे लाला॥

स्नेह भोज में नहीं जाना है, सबको दें समझाय रे लाला।
खूब बिगाड़ा होगा उसके, देखो फिर पछताय रे लाला।
अमृत सेठ भी रह गया, दाँत पीस रह जाय रे लाला।
रात हो गई त्याग है, दिन भर भूख में जाय रे लाला।
घर की रोटी त्याग दी, भोज नहीं खा पाय रे लाला।
अब कुछ हो सकता नहीं, सिर पीटे पछताय रे लाला॥

इत उत का मैं ना रहा, चूहे दौड़ लगाय रे लाला।
कड़क भूख मुझको लगी, नींद नहीं आ पाय रे लाला।
घरवाली कहती रही, अगर मानता बात रे लाला।
मैं भूखा रहता नहीं, कैसे गुजरे रात रे लाला।
आई थाली मना करे, वह नर तो पछताय रे लाला।
आधी छोड़ पूरी को ध्यावे, आधी वह गुमाय रे लाला॥

इस भाँति समझो सभी, आयु बीती जाय रे लाला।
धर्म ध्यान करलो अभी, सद्‌गुरु यह समझाय रे लाला।
नहीं माने वह अन्त में, करते पश्चाताप रे लाला।
कुछ नहीं जाये साथ में, जावे पुण्य व पाप रे लाला।
मानव भव पाकर अरे, कुछ तो लाभ उठाय रे लाला।
समय निकलता जा रहा, फिर अवसर न आय रे लाला।।

मानव भव तुझको मिला, लेना लाभ उठाय रे लाला।
वे पछताते हैं सदा दे, दोनों दीन गुमाय रे लाला।
हीरे सी अनमोल जिन्दगी, पुण्य का वजन बढाय रे लाला।
धर्म ध्यान तप त्याग से, पाप को नित्य हटाय रे लाला।
प्राज्ञ कृपा 'सोहन मुनि', निश दिन ही समझाय रे लाला।
संवर सामायिक धार ले, वे भव जल तिर जाय रे लाला।।

